जापानी लोगों द्वारा लिखित हिन्दी पत्रिका

ज्वालामुखी

दिसम्बर 1983

अंक चार

सम्पादक : योशिआकि सुज़ुकि

Scanned with CamScanner

जापानी लोगों द्वारा लिखित हिन्दी पत्रिका

ज्वालामुखी

अंक 4 : दिसम्बर 1983

सम्पादक
योशिआकि सुज़ुकि

तोक्यो, जापान

Scanned with CamScanner

प्रकाशक :

योशिआकि सुजुकि

5-9 मात्सुयामा 3 च्योमे, कियोसे-शि,

तोक्यो; जापान

YOSHIAKI SUZUKI

5-9 Matsuyama 3 Chome, Kiyose-shi,

TOKYO, JAPAN

सहयोग राशि :

विदेश में : 5 डालर (डाक व्यय सहित)

मुद्रक :

इमेज ग्राफिक, ४८४४/२४, गोविन्द लेन

दरियागंज, नई दिल्ली-

Scanned with CamScanner

अनुक्रम

1.	सम्पादकीय	योशिआकि सुजुकि	1
2.	ओसाका में ग्रीष्मकालीन पंजाबी गहन पाठ्यक्रम	डा० तोमिओ मिजोकामि	3
3.	नामंजूर लेख : शराब-दर्शन	महेन्द्र साइजि माकिनो	11
4.	कन्नड आन्दोलन—एक जापानी की दृष्टि में	डा० नोरिहिको उचिदा	15
5.	व्यंग्य : इन्डियन-जैपनीज भाई भाई (एक कल्पित वार्तालाप)	आकिरा ताकाहाशि	19
6.	हिन्दी कहानी में आधुनिकता का प्रतीक	योशिआकि सुजुकि	25
7.	आपका पत्र		29
8.	छः अगस्त 1983 हिरोशिमा में	आकिओ ताकामुरा	31
9.	समीक्षा	योशिआकि सुजुकि	33
10.	इस अंक के लेखक		36
11.	विशेष सहयोगी		36

Scanned with CamScanner

हमारे प्रकाशन

एशियाई आधुनिक साहित्य माला

भारत : "अपना मोर्चा" काशीनाथ सिंह
अनुवादक : शिगेओ आराकि

"आधुनिक हिन्दी साहित्य"
सं० योशिआकि सुजुकि (प्रेम में)

इन्दोनेशिया : "अनन्त रास्ता" मोताफल लुबिस
अनुवादक : नोरिआकि ओशिकावा

"छापामार सैनिक का परिवार"
प्रमोएदिया अनन्त तोएर
अनुवादक : नोरिआकि ओशिकावा

ताइवान : "सोयोनारा फिर मिलेंगे" ह्वान चुन मिन
अनुवादक : तानाका व फुकुदा

मनिला : "चमकता नाखुन" एडगर्ड लैएस
अनुवादक : मोतोए तेरामि

एशियाई आधुनिक साहित्य का अनुवाद एवं प्रकाशन

MEKONG CO., LTD.

25-1, Hongo 1-Chome, Bunkyo-ku, TOKYO, JAPNA

Scanned with CamScanner

सम्पादकीय

गत मास भारत की राजधानी में तीन दिवसीय तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन सम्पन्न हुआ। सौभाग्य से इस सम्मेलन की ओर से सम्पादक को भी आमंत्रित किया गया। इसके अलावा हमारी पत्रिका के विशिष्ट लेखक, ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय के डा० तोमिओ मिजोकामि, एशिया-अफ्रीका भाषा विद्यापीठ के प्रवक्ता श्री कोकि नागा, भारत-जापान सांस्कृतिक केन्द्र के अध्यक्ष डा० नरेश मंत्री भी आमंत्रित किऐ गए थे। इस सम्मेलन में आमंत्रित किए गए विदेशी, खास तौर पर पश्चिमी देशों से आए लोग सभी हिन्दी के विद्वान थे, किन्तु मैं ही मात्र एक ऐसा व्यक्ति था जिसे जापान के साधारण हिन्दी प्रेमियों में से चुना गया था। सम्भवतः विदेश में हिन्दी प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से चुना गया होगा। अगर यह सही है तो सम्मेलन के प्रति मैं आभार प्रकट करता हूं।

इस सम्मेलन के संबंध मैं तरह-तरह की शिकायतें थी। सम्मेलन अव्यवस्थित तो जरुर था। उद्घाटन समारोह में विद्वानों ने हिन्दी को शांति की भाषा कहा, पर उद्घाटन समारोह समाप्त होने के तुरन्त बाद ही शांति की भाषा अशांति की भाषा में बदल गई। भोजन कक्ष में धक्कम-धक्का के साथ हिन्दी की गालियां गूँज उठी। ऐसे वातावरण से भयभीत होकर मैं होटल वापस चला आया और विश्राम के बाद ही मुझे पता चला कि प्रथम संगोष्ठी के गोष्ठी-सत्र पाँच के अध्यक्ष-मंडल में मेरा नाम है, लेकिन उस के संबंध में सम्मेलन की ओर से मुझ से कुछ भी नहीं कहा गया था। मैं क्या जानता, जब मुझे पता चला तब तक गोष्ठी तो समाप्त ही हो गई थी।

इस प्रकार की व्यवस्था के बावजूद सम्मेलन का कार्यक्रम चलता रहा और चलाना ही पड़ा। सम्मेलन में कार्यरत लोगों के चेहरों पर भी थकावट की छाया स्पष्ट दिखाई दी। शायद सम्मेलन के आयोजकों द्वारा भी अनुमान लगाया नहीं जा सका कि देश-विदेश से इतनी बड़ी संख्या में हिन्दी-प्रेमी राजधानी दिल्ली पहुंचे। इन्द्रप्रस्थ स्टेडियम बिलकुल कलकत्ता जैसा रूप धारण करने लगा जैसे शरणार्थी महानगर में काम ढूंढने आते हैं वैसे ही लोग सम्मेलन में भाग लेने देश के कोने-कोने से आए। एक ओर मंच पर हिन्दी का जयजयकार, दूसरी ओर हिन्दी शरणार्थियों की भीड़-भाड़। माहौल भारत की भाषा समस्याओं को समझने के लिए काफी था। कितनी प्रतीकात्मक स्थिति।

लेकिन इस सम्मेलन की उपलब्धियां भी जरुर थीं। इस सम्मेलन का नारा "वसुधैव कुटुम्बकम्" पूर्णरूप धारण किया। देश-विदेश से आए लोगों के साथ हिन्दी में बात करने से हम लोगों के मन में एक ऐसी भावना

Scanned with CamScanner

उत्पन्न हुई कि भाषा एक दूसरे को जोड़ने का काम करती है। हिन्दी के माध्यम से लोगों के बीच में सद्भावना उत्पन्न हुई। यह सब से अच्छी उपलब्धि थी।

खैर, तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन समाप्त हो गया। हम लोगों ने इस सम्मेलन से काफी सीख ली है। अब हमें भारतीय भाषाओं की वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर हिन्दी का विकास करना होगा। प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के समय की हिन्दी की परिस्थिति और आज की हिन्दी की परिस्थिति में कोई खास परिवर्तन दिखाई नहीं पड़ता।

"ज्वालामुखी" का चतुर्थ अंक विलम्ब से अब आप के हाथ में है। सम्पादक के व्यक्तिगत कारण से इस अंक के बाद "ज्वालामुखी" हर वर्ष जनवरी में आप के हाथ में पहुंचा करेगा। जैसा कि हमारे पाठकगणों को याद होगा कि हमारी पत्रिका जापानी लोगों द्वारा लिखित हिन्दी पत्रिका है। हिन्दी के माध्यम से विचार, संस्कृति के आदान-प्रदान हेतु इस पत्रिका का श्रीगणेश किया गया। इस उद्देश्य को अमल में लाने के लिए "ज्वालामुखी" का विशेषांक जापान में प्रकाशित होने वाला है। साधारण जापानी साहित्य प्रेमियों को आधुनिक हिन्दी साहित्य से अवगत कराने के उद्देश्य से विशेषांक का शीर्षक "आधुनिक हिन्दी साहित्य परिचय" निर्धारित किया गया है। इस योजना से सहमत होकर भारत के हिन्दी साहित्यकारों ने,विद्वानों ने निःस्वार्थ सहयोग देना स्वीकार किया और साहित्य संबंधी निबंध सम्पादक के पास भेजे। आजकल सम्पादक इन निबंधों के जापानी भाषा में अनुवाद करने के काम में संलग्न है। विशेषांक आगामी अप्रैल तक प्रकाशित हो जाने की आशा है।

दीपावली पर्व
नई दिल्ली
4.11.1983

सम्पादक
योशिआकि सुजुकि

Scanned with CamScanner

ओसाका में ग्रीष्मकालीन पंजाबी गहन पाठ्यक्रम

डॉ० तोमिओ मिज़ोकामि

भूमिका

वैसे तो जापानी विश्वविद्यालयों में संस्कृत, हिन्दी, उर्दू आदि भारतीय भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन की अपनी-अपनी परम्परा है, पर भारत की अन्य भाषाओं का अध्ययन अभी शैशव में है। सम्भवत: बंगला ही एक ऐसी भाषा है जिसको अपवाद के रूप में लिया जा सकता है, क्योंकि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के कारण बंगला साहित्य की समृद्धि से इस देश में काफी लोग परिचित हैं और इस भाषा के पढ़नेवाले विद्यार्थियों की संख्या भी बढ़ रही है। तोक्यो से "कल्याणी" नामक पत्रिका भी निकलती है जिसमें बंगला साहित्य का परिचय दिया जाता है।

अब धीरे-धीरे कुछ अन्य भारतीय भाषाओं की शिक्षा भी दी जाने लगी है जिसका श्रेय तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध एशिया तथा अफ्रीका भाषा एवं संस्कृति संस्थान को है। इस संस्थान की स्थापना सन् 1964 ई. में हुई। इस संस्थान के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

1. एशिया तथा अफ्रीका की भाषाएँ तथा इन भाषाओं के माध्यम से इन देशों के इतिहास समाज तथा संस्कृति का अध्ययन।

2. एशिया तथा अफ्रीका की भाषाओं के शब्द-कोशों का निर्माण कार्य।

3. भाषा शिक्षण की व्यवस्था।

इस संस्थान में चालीस के करीब विद्वान हैं, पर अध्ययन-प्रधान होने के कारण अपना कोई विद्यार्थी नहीं है। यद्यपि यह संस्थान तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध है पर यह पूरे जापान के विद्वानों का आम संस्थान है। इस दृष्टि से उद्देश्य नम्बर तीन का बड़ा महत्व है। संस्थान प्रति वर्ष जुलाई और अगस्त दो महीनों में, जिस समय जापान में शैक्षिक संस्थाएँ ग्रीष्मकाल की छुट्टी के कारण बन्द रहती हैं, एशियाई तथा अफ्रीकी भाषाओं के शिक्षण की व्यवस्था करता है। तोक्यो में दो भाषाओं तथा ओसाका में एक भाषा के अध्यापन की व्यवस्था है।

इस भाषा शिक्षण की विशेषताएँ हैं :—

1. प्रतिदिन 6 घण्टे (शनिवार और रविवार को छोड़कर) के हिसाब से पाँच सप्ताह अर्थात कुल मिलाकर 150 घण्टे का पाठ्यक्रम है।

Scanned with CamScanner

2. जापानी अध्यापक तथा मूल भाषा-भाषी दो अध्यापक इस पाठ्यक्रम को चलाते हैं। यह कोई जरू नहीं है कि जापानी अध्यापक उसी संस्थान का विद्वान हो। अमुक भाषा का विशेषज्ञ अपने संस्थान में नहीं है संस्थान बाहरी विशेषज्ञ को इस पाठ्यक्रम के लिए नियुक्त करता है। ओसाका में तो प्राय: ओसाका विदेशी भा विश्वविद्यालय के अध्यापक नियुक्त हो जाते हैं।

3. पूरे देश से छात्र पढ़ने आ सकते हैं पर भाषा शिक्षण का लाभ अधिकतम हो—इस उद्देश्य को ध्य में रखकर सिर्फ दस सीटें रखी गई हैं।

इस प्रकार अभी तक 22 भाषाओं के शिक्षण की व्यवस्था की गई है। इनमें कुछ भारतीय भाषाएं सम्मिलित हैं—हिन्दी, बंगला, मराठी तथा पंजाबी और नेपाली भी। इस वर्ष ओसाका में पंजाबी के गहन पाठ् क्रम की व्यवस्था की गई है। लेखक तथा डाक्टर आत्मजीत सिंह, रीडर, पंजाबी अध्ययन विभाग, गुरुनानक विश्वविद्यालय ने इस पाठ्यक्रम के उत्तरदायित्व को ग्रहण किया। यह लेख उस पंजाबी पाठ्यक्रम से सम्बन्धि रिपोर्ट है।

(1.) शिक्षार्थियों का परिचय

जिन नौ शिक्षार्थियों ने इस पाठ्यक्रम के लिए आवेदन-पत्र दिये हैं उनकी आयु, शैक्षिक पृष्ठभूमि त पंजाबी सीखने के उद्देश्य आदि इस प्रकार हैं :—

शिक्षार्थी	लिंग	आयु	शिक्षा	अब तक सीखी विदेशी भाषाएं	उद्देश्य प्रेरणा-स्त्रोत
(क)	स्त्री	29	कृषि विज्ञान में एम.एस.सी., सम्प्रति केन्द्रीय हिन्दी संस्थान की छात्रा	अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू	गुरुनानक के विचारों रुचि
(ख)	पुरुष	22	तोक्यो विश्वविद्यालय का छात्र, एम.ए तृतीय वर्ष	अंग्रेजी, जर्मन	राष्ट्रीय संगठन तथा भाषायी राष्ट्रीयता में रुचि
(ग)	पुरुष	26	तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्यालय का छात्र, एम.ए. द्वितीय वर्ष, आधुनिक भारतीय इतिहास	अंग्रेजी, हिन्दी	1947 के भारत विभाजन पर शोध-कार्य कर रहा है
(घ)	पुरुष	20	ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय का छात्र, बी.ए. तृतीय वर्ष जर्मन	अंग्रेजी, जर्मन	भारतीय संस्कृति तथा सामाजिक भाषा-विज्ञान में रुचि

Scanned with CamScanner

शिक्षार्थी	लिंग	आयु	शिक्षा	अब तक सीखी विदेशी भाषाएं	उद्देश्य प्रेरणा-स्त्रोत
(ङ)	स्त्री	20	ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय छात्रा, बी. ए. द्वितीय वर्ष हिन्दी	अंग्रेजी, हिन्दी	भारतीय भाषाओं में रुचि
(च)	पुरुष	32	तोक्यो विश्वविद्यालय का स्नातक। जापान एयर लाइंज की नौकरी त्याग कर आया।	अंग्रेजी, जर्मन, फ्रांसीसी, स्पेनी, इतालवी, रूमानी	भविष्य में सिख धर्म के इतिहास के बारे में शोध-कार्य करने की इच्छा
(छ)	स्त्री	21	ओतेमान गाकुइन विश्वविद्यालय की छात्रा, बी.ए. द्वितीय वर्ष एशियाई सभ्यता अर्थ	अंग्रेजी, हिन्दी, जर्मन, उर्दू, बंगला	छात्र जीवन में अन्तिम ग्रीष्मकालीन छुट्टी को सार्थक बनाने के लिए
(ज)	पुरुष	20	ओसाका विदेशी भाषा विश्व-विद्यालय का छात्र, बी.ए. द्वितीय वर्ष हिन्दी	अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू	नवीन भारतीय जगत् की खोज के लिए। भविष्य में अध्ययन में सहायता मिले
(झ)	स्त्री	20	ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय की छात्रा, द्वितीय वर्ष, हिन्दी	अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू	भारतीय भाषाओं में रुचि

इस विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि सभी शिक्षार्थी अपनी रुचि के कारण(व्यावसायिक रूप से कोई नहीं।) पंजाबी सीखने के लिए प्रेरित हुए थे। इन में से तीन शिक्षार्थियों क, ग तथा च ने "आवश्यकता" के अनुसार पंजाबी सीखने को सोचा था। दो तिहाई शिक्षार्थियों ने पहले हिन्दी सीखी हुई है। अंग्रेजी तो सब को आती ही है।

(2.) पाठ्य पुस्तकें तथा सहायक पुस्तकें

प्रस्तुत लेखक ने इस पाठ्यक्रम के लिए तीन किताबें तैयार की हैं :

1. पंजाबी प्रवेश, 2. पंजाबी रीडर, 3. पंजाबी वार्तालाप

तीनों पुस्तकें गुरुमुखी व जापानी लिपि में छपी हैं। नम्बर एक में गुरुमुखी वर्णमाला के परिचय के साथ संक्षिप्त व्याकरण का परिचय दिया गया है। बीस पाठों में विभक्त होने के कारण एक दिन के हिसाब से प्रायः एक पाठ पढ़ाने की योजना थी। यद्यपि उच्चारण के अभ्यास में ज्यादा समय लगा था, पर मोटे तौर पर यह लक्ष्य पूर्ण हुआ। प्रत्येक पाठ में पहले सरल वाक्यों के उदाहरण फिर क्रमशः जटिल वाक्यों के उदाहरण दिये गये हैं,

Scanned with CamScanner

और पाठ के अंत में अनुवाद जापानी से पंजाबी में का अभ्यास भी दिया गया है। नम्बर दो में भी बीस पाठ हैं। लघु कथा, निबंध, लोक-कहानी, समाचार-पत्र, कविता, जीवनी इत्यादि साहित्य की नाना विधाओं की रचनाओं का संकलन है जो कि इस प्रकार है :—1. मेरा स्कूल, 2 पिकनिक, 3. स्त्री-विद्या, 4. एक लाड़ा, 5. अंवी दी कहानी, 6. दीवाली, 7. दाज दी लाहनत, 8. पंजाब दे मेले, 9. गुरु नानक देव जी, 10. साडे पिंड, कल आज ते भलक, 11. एके दा फल, 12. पंजाबी भाषा, 13 दिल्ली विच पंजाबी नूँ उर्दू दे बराबर सहूलतां प्राप्त, 14. पंजाबी बोलदे जापानी प्रोफेसर दा कसूता सवाल, 15. बसंत—धनी राम चात्रिक, 16. शहीदी संदेश—एस. एस. मीशा, 17. बल्ले जट्टा बल्ले—नंद लाल "नूरपुरी" 18. मेरा बचपन—हरिभजन सिंह, 19. अज्ज आखां वारिस शाह नूँ—अमृता प्रीतम, 20. शहीद-ए-आजाम सरदार भगत सिंह दा संखेप जीवन-चरित्र,

विश्वविद्यालय स्तरीय विद्यार्थियों की बुद्धि के स्तर को ध्यान में रखते हुए संकलित किया जाने के कारण प्रारम्भिक पाठ के लिए कुछ कठिन बन गई। कठिन शब्दों के अर्थ टिप्पणी के रूप में जापानी में दिये गये हैं। समय के अभाव के कारण पूरा पाठ नहीं पढ़ाया जा सका पर आधा पाठ पढ़ाया गया।

नम्बर तीन में पंजाबी वार्तालाप के नमूनों का संग्रह है जो दस पाठों में विभक्त है, यथा : 1. पालम हवाई अड्डे ओते, 2. दिल्ली दी सैर, 3. दवाखाने विच, 4. डी. ए. वी. कालेज जलंधर विच, 5. ढाबे विच, 6. पंजाब दे त्यौहार, 7. चंडीगढ़ दी सैर, 8. अमृतसर दी सैर, 9. खेडां वारे, 10. अमृता प्रीतम नाल मुलाकात,

10 को छोड़ कर बाकी सब संवाद परिकल्पना के आधार पर बनाये गये हैं। हरेक पाठ में पंजाबी बोलने वाले एक जापानी और पंजाबियों के बीच का संवाद है। ऐसी परिकल्पना पुस्तक को रोचक बनाने तथा संवादों को सजीव बनाने के उद्देश्य से ही की गई है। इन संवादों के माध्यम से पाठकों को पंजाबी संस्कृति से अवगत किया जाता है। ठोस संवादों से भरपूर होने के कारण यह उच्च-स्तर की पुस्तक बन गई। इसलिए कक्षा में तो केवल "पाठ एक" ही पचा सके। किन्तु प्रत्येक पंजाबी संवाद के साथ जापानी अनुवाद भी दिया गया है, इसलिए पाठक इस की सहायता से स्वयं सीख सकते हैं।

1 तथा 2 के लिए "टेप" भी तैयार किया गया जिसे सुनकर शिक्षार्थी स्वयं घर में अभ्यास कर सकें। इन तीन पुस्तकों के अतिरिक्त पंजाबी-अंग्रेजी कोश अमृतसर, आक्सफोर्ड सचित्र अंग्रेजी-पंजाबी शब्द-कोश भी सहायक पुस्तकों के रूप में शिक्षार्थियों को वितरित की गई।

(3.) लक्ष्य

भाषा शिक्षण के चार क्षेत्रों—पढ़ना, लिखना, बोलना, सुनना—में संतुलित रूप से प्राथमिक प्रवीणता प्राप्त करना इस अध्यापन का लक्ष्य था, अर्थात् व्याकरण के ढांचे को पूरी तरह समझना, सरल वाक्यों को पढ़-लिख सकना, शब्द-कोश की सहायता ले तो कुछ कठिन वाक्यों को भी पढ़ सके। तथा आम विषयों पर मामूली बातचीत कर सकना। यह लक्ष्य ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के बी. ए. प्रथम वर्ष के लक्ष्य के साथ साम्य रखता है अर्थात विश्वविद्यालय के साल भर के नियमित पाठ्यक्रम को पाँच हफ्ते में पूरा करना है—इसी में तो गहन पाठ्यक्रम की सार्थकता है। परन्तु केवल पंजाबी "भाषा" में प्रवीणता प्राप्त करना पर्याप्त नहीं होता अपितु "संस्कृति" सम्बन्धी जानकारियाँ भी हासिल करना बुद्धिजीवी शिक्षार्थियों के लिये बहुत आवश्यक है। इस दृष्टि से मूल भाषा-भाषी डाक्टर आतमजीत सिंह का बड़ा योगदान मिला। उनके लिए तो संस्कृति के बारे में

Scanned with CamScanner

अलग कोई "लैक्चर" देने की जरूरत नहीं थी। भाषा शिक्षण के बीच-बीच में संस्कृति का परिचय देते रहे। उदाहरण के लिये उच्चारण-अभ्यास में "पंजा" जैसा मामूली शब्द आ गया तो इसी शब्द को लेकर "पंजा साहिब" की ऐतिहासिक व्याख्या की गई। इस प्रकार का वर्णन उच्चारण-अभ्यास की नीरसता में रस भरने के लिए बड़ा सहायक हुआ और जिज्ञासु शिक्षार्थियों को बड़ा लाभ हुआ।

इसके अलावा हर रविवार को कोबे शहर में स्थित गुरुद्वारे में पूजा के लिये शिक्षार्थियों को बुलाया जाता था जहाँ पंजाबी सुनने का और पंजाबी भोजन के स्वादन का अवसर मिलता था। "लंगर" के बाद अकसर किसी पंजाबी के घर चाय के लिये बुलाया जाता था, वहाँ भी शिक्षार्थियों को पंजाबी के अभ्यास का मौका मिलता था। इस प्रकार का अनुभव भी शिक्षार्थियों के लिए उत्साहवर्द्धक तत्व बन गया।

यद्यपि लिखित भाषा के स्तर पर भारतीय पंजाबी तथा पाकिस्तानी पंजाबी में बड़ा अन्तर है, पर बोलचाल की पंजाबी दोनों में प्रायः एक जैसी है। पाकिस्तानी पंजाबी तथा भारतीय पंजाबी का सम्बन्ध कुछ इस प्रकार है जिस प्रकार उर्दू और हिन्दी का है। इस पाठ्यक्रम में भारतीय पंजाबी को प्रमुख आधार मानकर पढ़ाया गया, क्योंकि राज्य भाषा के रूप में पंजाबी का विकास भारत में अधिक हो रहा है। पाकिस्तान में, कुछ अपवादों को छोड़कर पंजाबी अभी सिर्फ बोलचाल की भाषा है। पर चूँकि पंजाबी भाषा-भाषियों की संख्या उधर पाकिस्तान में ज्यादा है, इसलिये बोलचाल का अभ्यास कराते समय इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि शिक्षार्थी पाकिस्तान में भी सँचारित कर सके।

(4.) अध्यापन की प्रक्रिया

1. प्रथम सप्ताह

प्रथम दिन से ही गुरमुखी लिपि का परिचय कराया गया। लगभग 50 अक्षर की लिपि सीखनी जापानियों के लिए बहुत कठिन नहीं है, क्योंकि उन लोगों को बचपन से हजारों की तादाद में चीनी चित्राक्षर सीखने पड़ते हैं जिससे उन लोगों की दृष्टि-इन्द्रियां तेज हो जाती है। परन्तु उन लोगों की श्रवण-इन्द्रियां क्षीण हैं : एक भाषा भाषी देश होने के कारण विदेशी भाषाओं के विशेष उच्चारण सुनने का मौका प्रायः नहीं मिलता और जापानी भाषा की ध्वनि-व्यवस्था भी बहुत सरल है। शुरू-शुरू में ही प्रायः सभी शिक्षार्थियों को पंजाबी उच्चारण की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

यह अवश्य है कि जिन्होंने हिन्दी सीखी है उनको पंजाबी उच्चारण सीखने में शेष शिक्षार्थियों की तुलना में कम कठिनाई है। जिन शिक्षार्थियों ने कभी कोई भारतीय भाषा न सीखी थी उनके लिए विशेष रूप से महाप्राण एवं अल्पप्राण का भेद तथा मूर्धन्य उच्चारण कठिन लगे थे। परन्तु हिन्दी पढे हुए शिक्षार्थियों के लिए भी मूर्धन्य व्यंजन 'ण' का उच्चारण बहुत कठिन लगा जिसका प्राधान्य पंजाबी उच्चारण की अन्यतम विशेषता है। हिन्दी पढे हुए कुछ शिक्षार्थियों में अल्पप्राण उच्चारण को अनजाने में महाप्राण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ी। जापानी में महाप्राण तथा अल्पप्राण का अन्तर नहीं है, बल्कि प्रायः अध्याक्षरित अल्पप्राण उच्चारण से कठिन लगता है। 'र', 'ल' तथा 'ड़' की कठिनाई तो "जातीय" समस्या बन गई है।

केवल बहुत सजग शिक्षार्थी ही इन तीन ध्वनियों का भेद कर सकते हैं अन्यथा नहीं। एक शिक्षार्थी

Scanned with CamScanner

अध्याक्षरित सघोष उच्चारण को नियमित रूप से अघोष करके बोलता था जो कि "जातीय" न होकर "व्यक्तिगत" समस्या थी।

इस प्रकार उच्चारण की आशातीत कठिनाइयों का सामना करने के लिए पूरा एक सप्ताह लगा दिया गया। समय के हिसाब से यह पूरे पाठ्यक्रम की अवधि का पांचवां हिस्सा था। पढ़ने वाले यदि केवल जापानी अध्यापक होते तो केवल उच्चारण के अभ्यास के लिए इतना समय न लगता। पर भाषा में संतुलित प्रवीणता प्राप्त करने के लिए उच्चारण के महत्व की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए। फिर मूल भाषा भाषी डाक्टर आत्मजीत सिंह के सहचार का पूरा फायदा क्यों न उठाया जाय—यह सोचकर उच्चारण के अभ्यास पर बहुत जोर दिया गया। उच्चारण की क्षमता में व्यक्ति-व्यक्ति में अन्तर था। और यह अन्तर बढ़ता गया। जिनको हिन्दी नहीं आती थी उनमें से एक-दो शिक्षार्थी परिश्रम से पंजाबा उच्चारण की कठिनाइयों को दूर करने में काफी हद तक सफल होने लगे।

हिन्दी पढ़े हों या न पढ़े हों, सबके लिए पंजाबी की विशेष तान कठिन लगी थी। हिन्दी जानने वालों के पंजाबी उच्चारण में हिन्दी की ध्वनि व्यघातक होती सुनाई देती थी। कुछेक शिक्षार्थियों को सुनकर पंजाबी तान की पहचान होने लगी, पर अन्तिम समय तक अपने मुख से सहज भाव से उच्चरित कोई नहीं कर सकता था।

2. द्वितीय सप्ताह

प्रौढ़ व्यक्तियों को छः घण्टे केवल उच्चारण का अभ्यास तथा शब्दों को कंठस्थ करते-करते उकताहट का आना स्वभाविक था, यद्यपि डाक्टर आत्मजीत सिंह की विनोदशीलता तथा रसिकता भरी वार्ता ने शिक्षार्थियों को ऐसा होने से बचा दिया। केवल 16 पृष्ठ के अभ्यास के लिए पूरे 30 घण्टे लगाये गये, अतः इस एकरसता से बचने के लिए द्वितीय सप्ताह के प्रथम दिनों में पंजाबी संस्कृति के बारे में दो विशेषज्ञों से "लेक्चर" कराया गया। प्रो. कुवाजिमा ने "पंजाब का आधुनिक इतिहास" पर तथा प्रो. हामागुची ने "पंजाब का आर्थिक विकास" पर दो घंटे का भाषण दिया।

दूसरे दिन से व्याकरण की व्याख्या शुरू हो गई। "मैं जापानी हाँ।", "मैं भारती हाँ।" "तुसीं पंजाबी हो।" सरीखे वाक्यों की व्याख्या लेखक ने ही की और मौखिक अभ्यास डाक्टर आत्मजीत सिंह ने कराया। मौखिक अभ्यास तो हरेक वाक्य के लिए तीन बार समवेत स्वर में कराया गया, उसके बाद व्यक्तिगत अभ्यास भी। व्यक्तिगत अभ्यास में अशुद्धियों को यथासंभव शुद्ध करने का प्रयत्न भी किया गया। प्रत्येक नये वाक्य के लिए उसका आदेश अभ्यास भी कराया गया।

3. तृतीय सप्ताह

व्याकरण अपने मध्यम चरण पर पहुँच गया। प्रत्येक पाठ के अन्त में दिया गया अनुवाद का अभ्यास शिक्षार्थियों से श्याम पट पर लिखवाया गया। फिर उस वाक्य के आधार पर नया वाक्य मौखिक रूप से बनाने को कहा गया। कुछ शिक्षार्थी मौखिक प्रश्नोत्तर शीघ्र देने में कुशल थे, कुछ तो सुन्दर ढंग से शुद्ध वाक्य लिखने में। ये दो क्षमताएँ आनुपातिक नहीं थीं। कुछ ऐसे शिक्षार्थी भी थे जो स्वभाव से शांत और मितभाषी होने के कारण प्रश्नों के उत्तर मुख से नहीं दे पाते थे पर शुद्ध पंजाबी लिखने में किसी से पीछे नहीं थे।

Scanned with CamScanner

यह तो स्वयंसिद्ध बात है कि हिन्दी न जाननेवालों को पंजाबी सीखने में बड़ी असुविधाएँ और कठिनाइयां हैं परन्तु हिन्दी न जाननेवाले तीन शिक्षार्थी अपनी मेहनत से इन कठिनाइयों को दूर करने लगे और हिन्दी जाननेवाले कुछ अन्य सहपाठियों से भी आगे बढ़ने लगे। इस हफ्ते में पाठ्यपुस्तक एक के 13वें पाठ तक समाप्त किया गया। इसका मतलब यह हुआ कि व्याकरण के महत्वपूर्ण अंश पढ़ाये जा चुके थे। सरल परीक्षा भी ली गई—अधिकतम अंक 99 था और न्यूनतम 45।

4 चतुर्थ सप्ताह

सुबह तीन घंटे व्याकरण के शेष अंश पढ़ाये गये और दोपहर के तीन घण्टे पाठ्यपुस्तक दो की पढ़ाई शुरू कर दी गई। "रीडर" अभी कोई धारा-प्रवाह नहीं पढ़ सकता था पर टिप्पणी एवं शब्द-कोश की सहायता से कुछ शिक्षार्थी काफी समझ लेते थे। दूसरी परीक्षा ली गई—उतना ही परिणाम निकला जितना पहली परीक्षा का।

5 पंचम सप्ताह

पाठ्य पुस्तक एक समाप्त कर दी गई। पाठ्य पुस्तक दो के आधे अंश समाप्त हो गये। दो कविताओं "मेरा बचपन" तथा "अज्ज आखां वारिस शाह नूं।" की व्याख्या डाक्टर आत्मजीत सिंह ने अंग्रेजी के माध्यम से की। पंजाबी मनोभावों की व्याख्या पंजाबी के विशेषज्ञ के द्वारा ही सम्भव है—यह लेखक का मत है। डाक्टर आत्मजीत सिंह ने इतनी प्रभावशाली शैली से तथा जोश के साथ पढ़ाया कि सभी शिक्षार्थी मुग्ध हो गये। बाद में हरेक शिक्षार्थी से पूछा जाने पर कि व्याख्या कितनी समझ में आई, उत्तर इस प्रकार मिले :

1. पूर्णतया समझ में आई·····1
2. लगभग समझ में आई·····5
3. समझने में काफी कठिन लगी·····2
4. प्रायः समझ में नहीं आई·····1

एक दिन दो पंजाबी चलचित्र विडियो के माध्यम से दिखाये गये। चलचित्रों के नाम थे "गिद्धा" और "साल सोलवां चढ़िया"। यद्यपि पूरा संवाद समझने में शिक्षार्थियों को दिक्कत थी, पर उन्होंने फिल्मों का मजा तो ले लिया।

अन्तिम दिन में डाक्टर आत्मजीत सिंह ने पंजाबी में पत्र लिखने की विधि के बारे में श्याम पट पर उदाहरण दे देकर समझाया, हां विनोद प्रिय डाक्टर साहब यह कहना न भूले कि हम पंजाबी चिट्ठी लिखने में बहुत सुस्त हैं। समय के अभाव के कारण पाठ्य पुस्तक तीन प्रथम पाठ को छोड़कर नहीं पढ़ायी जा सकी।

(5.) मूल्यांकन तथा निष्कर्ष

प्रत्येक शिक्षार्थी का मूल्यांकन अपनी अपनी कुल उपलब्धि के आधार पर इस प्रकार किया जायेगा :—

प्रथम श्रेणी·····क, ग, ङ तथा च
द्वितीय श्रेणी·····ख, घ, ज तथा ञ
तृतीय श्रेणी·····छ

Scanned with CamScanner

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि जापान में सर्वप्रथम चलाये गये इस पंजाबी पाठ्यक्रम को बड़ी सफलता मिली। सीमित अवधि को देखते हुए यह बड़ी उपलब्धि थी। इन शिक्षार्थियों में से भविष्य में पंजाबी भाषा व साहित्य के विशेषज्ञ उत्पन्न हो सकते हैं। हिन्दीतर भारतीय भाषा सीखने के लिये हिन्दी का ज्ञान बहुत ही लाभदायक है बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि हिन्दी का ज्ञान आवश्यक है। "परमावश्यक" इसलिये नहीं कह सकते कि उक्त प्रथम श्रेणी प्राप्तकर्ताओं में एक ऐसा शिक्षार्थी भी शामिल है जिसने हिन्दी कभी नहीं पढ़ी थी।

अब भविष्य में ऐसा समय आयेगा जब जापान में यह समझा जाएगा कि भारत-प्रेमी या भारतीय-विद्या जिज्ञासु विद्यार्थी के लिये हिन्दी का ज्ञान होना कोई बड़ी बात न होकर आम बात होगी। और केवल हिन्दी भाषा का ज्ञान पर्याप्त नहीं समझा जायेगा जब तक किसी हिन्दीतर भाषा का ज्ञान न हो। इस दिशा में एशिया तथा अफ्रीका भाषा एवं संस्कृति संस्थान सराहनीय कार्य कर रहा है। सूचना मिली है कि निकट भविष्य में तमिल भाषा के गहन पाठ्यक्रम की योजना की जा रही है।

जापान में भारतीय फिल्म उत्सव

21 सितम्बर से 25 सितम्बर तक और 15 अक्तूबर से 30 अक्तूबर तक जापान में पहली बार भारतीय फिल्म-उत्सव का आयोजन हुआ।

हमारे पाठकगण को सुश्री तामाकि मात्सुओका का नाम याद होगा। उन्होंने उस उत्सव के लिये बड़ी भूमिका निभाई। उनके प्रयास से ही उस उत्सव का आयोजन हुआ। भारतीय फिल्म उत्सव में दो हिन्दी फिल्में "अंकुर", "घरौंदा" और एक मलयालम फिल्म "तंबू" दिखाई गई। और उस उत्सव के लिये जापानी लोगों को भारतीय फिल्मों के बारे में जानकारी देने के लिये छोटी-सी पुस्तिका भी प्रकाशित की गई, जिसमें तोक्यो स्थित भारतीय दूतावास के राजदूत, प्रदर्शित फिल्मों के निर्देशकों आदि का संदेश और भारतीय फिल्म अभिनेता अभिनेत्रियों का संक्षिप्त परिचय भी दिये गये हैं।

साधारण जापानियों को भारतीय फिल्मों के माध्यम से इस मौके पर भारतीय समाज की एक झलक देखने को मिल सकी। भारतीय फिल्म उत्सव की आयोजन समिति के इस प्रयासों की बड़ी प्रशंसा की गई है।

समिति का पता है :—

Exective Committee
Indian Film Festival in Japan
c/o "Group Gendai", Fujita Building,
1—12—3 Shinjuku, Shinjuku-ku,
TOKYO, JAPAN-160

Scanned with CamScanner

एक नामंजूर लेख

महेन्द्र साइजी माकिनो

करीब 25 वर्ष के अपने भारत प्रवास में जो कुछ मैंने पढ़ा, सीखा, समझा और अनुभव किया, उसे हिन्दी और जापानी में व्यक्त करते आया हूं जिसे मैंने अपना कर्तव्य भी समझ लिया है। जापानी भाषा में भारत परिचय विषयक निबंध लगभग 36 और हिन्दी में जापान परिचय विषयक निबंध लगभग 53 तक पहुँच गये हैं। पर एक लेख मैं किसी प्रकार भी छपवा न सका। यह था, 'शराब-दर्शन : एक जापानी दृष्टि।' शराब आज भी एक चर्चा का विषय है जिसके सम्बन्ध में बुरा-भला कहा जाता है। हमारे जापान और जापानी संस्कृति में शराब का एक महत्वपूर्ण स्थान है जो जानने वाले ही जानते हैं। ऐसे विषय को छोड़कर मैं अपना परिचय कार्य पूरा नहीं कर सकता। पर एक भय भी था कि भारतवासियों को हमारी जापानी संस्कृति के प्रति गलतफहमी ही न हो जाय। 'ज्वालामुखी' हम जापानियों के लिये एक स्वतंत्र क्षेत्र है जिसमें ऐसे अभद्र लेख भी छप सकते हैं। इसलिए मैंने यह लेख यहाँ ज्यों का त्यों पेश करने की गुस्ताखी की है।

संसार में शायद ही कोई ऐसी जगह होगी जहाँ शराब न पी जाती हो या जहाँ शराब न बनती हो। यह आज संभव नहीं है। पूर्व से पश्चिम तक आज सभी लोग शराब से परिचित हैं। पर कभी किसी ने आज तक गहराई से सोचा है कि असल में यह क्या चीज है ?

बन्दर अपने बिल में फलों को इकट्ठा करके संचय करता था जो बाद में सड़कर खुशबूदार तथा नशीली चीज बन जाती थी—यही थी शराब की उत्पत्ति, परन्तु न बंदर उसे जानता था, न अपने काम में लाता था। केवल बुद्धिमान मानव ने ही उसे समझा था। क्योंकि शराब जीवन का रस है, पशु जगत में उस का स्थान नहीं। वह केवल मानव के लिए प्राकृतिक देन है और मानव ने ही अपने जीवन की नश्वरता की कामना करते हुए उसके प्रयोग की शुरूआत की।

प्राचीन काल में जब मनुष्य अनाज तथा फलों को संचय करके किसी गुफा में रखता था, तब वह अपने आप पककर खमीर उठने से शराब तैयार बन जाती थी। आदि-मानव दानव से डरता था। इस भयंकर दुष्टात्मा को खुश करने या उससे मित्रता बनाने के लिए इस शराब को उसके सामने चढ़ाया करता था। जिस प्रकार भारत के हिन्दू धर्म में सब से प्राचीन ग्रंथ वेद में 'सोम' के नाम से ईश्वर पूजा के लिए शराब को अर्पित करने का वर्णन है, उसी प्रकार जापान में भी शराब को 'ओमिकि' अर्थात 'पवित्र पानी' कहा गया और जिसे प्राचीन काल में जापानी हजारों देवताओं को चढ़ाते थे। मूलरूप में तो शराब देवता के साथ एक होने के लिए और देवता के साथ भोगने की चीज थी। वह इतनी पवित्र चीज मानी जाती थी कि ऐसा कहा जाता था कि शराब के साथ जो होता है, वह देवता के साथ होता है। फिर धीरे-धीरे मनुष्य उसका प्रयोग मनुष्य के साथ करने लगे। मनुष्य को नशे में

Scanned with CamScanner

डालकर मन प्रसन्न करने वाली इस शराब में एक अजीब-सी शक्ति मौजूद है। प्राचीन काल से जापान खेती प्रधान देश था और चावल, मछली जापानियों का मुख्य भोजन रहा है। किसी उत्सव-त्यौहार के अवसर पर देवताओं को प्रसन्न करने हेतु देवालय या मन्दिर में सब से पहले भगवान के सामने शराब जो चावल से बनती थी, को कच्ची मछली के साथ अवश्य चढ़ाया जाता था। इसका अर्थ यह होता है कि देवता एक प्रकार का मेहमान है जिसका स्वागत सत्कार और खुशामद की जाय और इस तरह मानव तथा देवता के बीच एक सम्बन्ध स्थापित हो जाय। जो भी हो, जापानी जीवन तथा संस्कृति में देवता और मानव, सरकार और जनता, मालिक और सेवक, गुरु और शिष्य, स्वामी और मेहमान, को आपस में जोड़ने वाली यही शराब थी।

शराब केवल पूजा-उत्सव-त्यौहार की चीज न रही। धीरे-धीरे उसका सेवन सामाजिक और पारिवारिक रूप धारण कर व्यापक होने लगा। चाहे विवाह हो, चाहे दाह संस्कार, चाहे सुख, चाहे दुःख—सभी अवसर पर शराब का प्रयोग होने लगा। मानव-सम्बन्ध को मधुर रखने के लिए यह एक अनिवार्य साधन बन गया। जैसे आम जनता अपने दिन भर के कार्य से थक कर शरीर में जो तनाव आता है, इसे दूर करने के लिये अथवा किसी बीमारी पर स्फूर्तिदाता (tonic) के रूप में अपने नित्य जीवन में शराब का सेवन भी करने लगी। जिस प्रकार भारत में किसी शुभ अवसर पर मिठाई का आदान-प्रदान होता है, उसी प्रकार जापानी समाज में शराब को भेंट-उपहार के रूप में लेने देने का रिवाज है।

प्राचीन काल से शराब को 'दिव्य-दवाई' कहकर पुण्य चीज मानते थे। जैसे जर्मन देश में बीयर की गंजी बनाकर रोगी को खिलाया जाता था और ब्रिटेन में महामारी की निरोधक दवाई के रूप में विस्की का सेवन होता था उसी प्रकार जापान में भी जापानी 'साके' को गर्म करके ठण्ड के समय पीने से सर्दी से बचा जाता था। ऊँचे पहाड़ पर कड़ाके की ठण्ड में साधना करने वाले बौद्ध भिक्षु भी इसका प्रयोग करते थे। पर शराब के नशे में जो एक प्रकार का विष है, उसे दूर करने के लिए भिक्षु जापानी चाय का सेवन भी करते थे। बहुत कड़वी हरी चाय शराब के नशे को खतम करने के लिये उपयोगी है। जिस देश में जो अधिक उपज होती है उसी उपज से, जैसे पूर्वी देशों में अधिकांश अनाज से शराब बनती है और पश्चिमी देशों में फलों की शराब ज्यादा बनती है। चावल अधिक खाने वाले देश जापान में चावल की 'साके' नामक शराब बनती है, तो अंगूर का उत्पादन अधिक होने वाले देश फ्रांस में 'वाइन' (wine) और जहाँ गेहूं तथा जौ का उत्पादन ज्यादा होता है, वहाँ (बीयर) अधिक बनाई जाती है। दुनिया भर में शराब कहीं भी बनाई जाये, वहाँ का पानी स्वच्छ होना चाहिये।

चीन के एक प्राचीन ग्रन्थ में शराब के 10 गुणों का वर्णन है जो कि भारत में अवगुण माने जाते हैं। लिखा है कि शराब स्वर्ग की देन है, जो शारीरिक तथा मानसिक कष्टों को दूर करने वाली, चिन्ताओं तथा उदासी को भुलाने वाली, मन को शुद्ध करने वाली, रोग को दूर करने वाली, विष का नाश करने वाली, मानव-चरित्र को शिष्ट बनाने वाली, मानव-संबंध को मधुर करने वाली और दीर्घायु को कायम करने वाली होती हैं। जापानी कहावत में कुछ इस प्रकार का वर्णन है "जो पुरुष होते हुए भी शराब नहीं पी सकता (poor drinker) वह बिना तले के गिलास जैसा है जो किसी काम का नहीं"। जापान में यह भी कहा जाता है कि शराब छः गुणों का भण्डार है जो इस प्रकार हैं:—शराब परोसते हुए मानव-प्रेम की भावना उत्पन्न होती है, शराब से सत्कार करने में शिष्टता आती है, पीकर अपने को भूलने में वीरता रस का अनुभव होता है, मेजबान और मेहमान आपस में नम्र हो जाते हैं, इसे पीकर मनुष्य अपना मूल स्वभाव नहीं भूलता है और नशे से जागने पर आपस में सान्त्वना तथा सहानुभूति देने लग जाता है।

Scanned with CamScanner

यद्यपि शराब संसार में अमृत मानी जाती है, किन्तु अगर इन सीमाओं को पार कर अनुचित मात्रा में उसका सेवन किया जाय, तो ये सभी गुण अवगुण में बदल जाते हैं। कहा जाता है कि शराब में 36 दोष हैं जो कि इस प्रकार है :—प्रथम चुस्की में मनुष्य शराब पियेगा, पर दूसरी चुस्की में शराब स्वयं शराब पियेगी और अन्तिम घूँट में शराब इंसान को पी लेती है। चाटने भर से शराब मनुष्य के दीर्घ जीवन की एक दवा है, पर दूसरी घूँट पीने से मन को व्याकुल करने का माध्यम और तीसरी चुस्की से अपने स्वदेश को भी खतम करने का आधार बन जाती है। शराब पीने से मनुष्य न केवल सुस्त हो जाता है, बल्कि अभिमानी भी बन जाता है। यदि कोई अपनी मितव्ययता और मेहनत से अपने घर को कितना भी समृद्ध बना ले, परन्तु शराबी बन जाने से वह सुस्ती तथा खर्चीलेपन से अपने घर-संसार को नष्ट कर डालेगा। शराब पीने से एक क्षण के लिए तो चिंता दूर हो जाती है, किन्तु और ज्यादा पीने से मनुष्य भूल करने लगता है। अतः बदनामी के साथ अपने परिवार को भी नष्ट कर लेता है। इन गुणों तथा दोषों को देखते हुए हमें इस बात पर ध्यान देना होगा कि शराब अवश्य पवित्र चीज है, पर उसे बुरी चीज बनाने में मनुष्यों का ही हाथ है।

प्राचीन काल से हमारे जापान में यह भी कहा जाता था कि शराब 'समृद्धि का पानी' है। क्योंकि उसके सेवन से मनुष्य अनजाने में अपने को समृद्ध महसूस करने लगता है। एक ओर पूर्व देश जापान के महायान बौद्ध धर्म, विशेष रूप में 'ज़ेन' (zen) संप्रदाय में शराब को 'बुद्धि का पानी' मानते थे, तो दूसरी ओर पश्चिम के ईसाई धर्म में शराब को 'ईश्वर का रक्त' मानते हैं, और अंगूर की शराब (wine) पीते हैं। जापान में इक्क्यू नामक ज़ेन-भिक्षु अपनी विनोद-प्रियता के लिए प्रसिद्ध है। वे शराब खूब पीते थे, पर उनका विचार यह था कि साधक अपनी इच्छा के अनुसार जो कुछ करें, पर इंसान अपने साफ खुले दिल में ही 'क्षणिक बुद्धि' (ज्ञानोदय—enlightenment) प्राप्त कर सकता है। जापान के बड़े-बड़े साहित्यकार या कलाकारों ने भी शराबी होते हुए भी दुनिया को अपनी उत्तम रचना द्वारा चमत्कृत किया है।

जापानी इतिहास में शराब से संबंधित कई रिवाज मिलते हैं। जैसे, किसी समय राज-परिवार की ओर से सामूहिक रूप से खास लोगों को जब निमंत्रित किया जाता था, तब राज दरबार में शराब पीने की प्रतियोगिता भी होती थी। उस अवसर पर एक बहुत बड़े पात्र में भरी शराब बारी-बारी से सब को पीनी पड़ती थी। एक ही पात्र में एक ही चीज को लेने में प्रेम तथा निकट मित्रता का अनुभव होता है। इसी तरह अपने-अपने गिलास को एक दूसरे से बदल-बदल कर शराब पीने में एकता का आभास होता है। जब सरदार योद्धा सभा बुलाते, तब खेल तथा कविता के रचना पाठ के साथ शराब का भोज भी देते थे। इसमें अलग-अलग दस स्थानों से इकट्ठा की गयी शराब रखकर उसे आजमाना और बतलाना होता था कि यह शराब कहाँ की है। ठीक बताने वाले को इनाम मिल जाता था। जापान के गृह-युद्ध काल में कभी-कभी कोई किसी सरदार को शराब के नशे में ही अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था। कोई सरदार अपने सिपाहियों को शराब पिलाकर उनकी अपनी गुप्त बातें सुनने का मजा उड़ाया करते थे। या कभी दूर से आये हुए मेहमान का शराब से सत्कार कर जब वह खूब बोलने लग जाता, तब विभिन्न इलाकों का समाचार सुना करते थे।

जापान में एक विद्वान था, शराबी। जो अपने मध्याह्न भोजन के रूप में हमेशा बांस में शराब डालकर ले जाता था। यदि उसे शराब न मिले तो उसकी बुद्धि काम नहीं करती थी। उसके देहान्त के पश्चात उसके शिष्यगण मिलकर हर वर्ष उसकी पुण्य तिथि के अवसर पर शराब का भोज दिया करते थे। एक समय ऐसा था कि धनुष विद्या की प्रतियोगिता में अपना मानसिक तनाव कम करने के लिये या मन को शान्त रखने के

Scanned with CamScanner

लिए प्रतियोगी गुप्त रूप से थोड़ी-सी शराब पीकर धनुष-स्थान पर प्रवेश करते थे। आजकल भी कुछ लोग भाषण देने के पहले चाय के बदले में कुछ घूँट शराब पीकर अपना भाषण शुरू करते हैं।

शराब सचमुच 'नशे का पानी' है, पर कोई बुरी चीज नहीं है। उसे अमृत बनायें या विष, यह पीने वाले मनुष्य पर निर्भर होता है। आधुनिक युग के पागलपन में मनुष्य को शान्त करने या मानव संबंधी व्यवहार को मधुर तथा शिष्ट बनाने के लिए शराब से उपयुक्त चीज क्या कोई और होगी ?

श्रद्धांजलि

19 जुलाई, 1983 की शाम जापान के हिन्दी भाषा के विद्वान प्रो० क्यूया दोइ का आकस्मिक निधन हो गया। उनके निधन के समाचार से जापान के हिन्दी प्रेमियों के बीच में गहरे दु:ख की लहर फैल गयी। प्रो० दोइ ने जापानी हिन्दी प्रेमियों को कितना प्रभावित किया यह कहने की आवश्यकता नहीं। उन्हें हिन्दी के प्रति गहरा लगाव और प्रेम था। वे हिन्दी भाषा के ही विद्वान नहीं थे, बल्कि साहित्य प्रेमी भी थे। उन्होंने प्रेमचन्द का उपन्यास "गोदान" जापानी भाषा में अनुवाद करके प्रकाशित भी किया था। और उन्होंने जापानी-हिन्दी शब्दकोष बनाया था इससे जापान के हिन्दी प्रेमियों को बड़ी सुविधा मिली। प्रो० क्यूया दोइ की हिन्दी सेवा के लिये भारत सरकार ने सन् 1978 में विश्व हिन्दी पुरस्कार से सम्मानित किया था। तोक्यो विदेशी भाषा विश्व-विद्यालय से अवकाश प्राप्त होने के बाद भी वे गैर-सरकारी विश्वविद्यालयों एवं निजी संस्थानों में हिन्दी पढ़ाते रहे और रेडियो जापान के हिन्दी प्रसारण के कार्यक्रम में हर शुक्रवार रात को भारतीय श्रोताओं के लिये हिन्दी में जापानी भाषा पढ़ाते रहे। अब वे इस दुनिया में नहीं रहे। श्रद्धांजलि।

Scanned with CamScanner

कन्नड आंदोलन—एक जापानी की दृष्टि में

डॉ० नोरिहिको उचिदा

आमुख

कई महीनों से कर्नाटक में भाषा समस्या को लेकर संग्राम हो रहा है। यह बात अजीब लगती है क्यों कि कर्नाटक भारत में सबसे उदार प्रदेश के रूप में प्रसिद्ध है। मैं 1980 दिसम्बर से बंगलूर में शोधकार्य कर रहा हूं और कन्नड आंदोलन के एक केन्द्र बंगलूर विश्वविद्यालय के शिक्षकावास में रहकर इस आन्दोलन को अपनी आंखों देखा है। इसलिए एक विदेशी की दृष्टि में इस पर अपना विचार प्रकट करना चाहता हूं।

तीस वर्ष पहले जब मैंने भारतीय भाषाओं का अध्ययन आरम्भ किया था, मुझे विश्वास था कि स्वतंत्र भारत की राजभाषा हिन्दी संसार की प्रभावशाली भाषाओं में से एक हो जाएगी। परन्तु मेरा पूर्वानुमान गलत निकला। अब भाषाई स्थिति को देखता हूं तो यह विश्वास करना कठिन है कि भारत स्वतंत्र देश है।

भारतवर्ष की राजधानी के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में परीक्षा हिन्दी भाषा में लिखने की अनुमति नहीं है, अंग्रेजी का प्रयोग करना चाहिए। तमिलनाडु में, जहाँ लोगों पर भाषांधता का आरोप लगाया जाता है, तमिल विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। नये अध्यापकों के लिए समालाप अंग्रेजी में हुआ। भारत में महाविद्यालयों में शिक्षा अधिकतर अंग्रेजी में होती है। अधिकतर प्रदेशों में प्रशासन और कचहरी की भाषा अंग्रेजी है। बंगलूर के न्यायालय के पास वाले एवन्यू रोड में बहुत से लिपिक टंकण मशीन लेकर बैठे हुए हैं। यह टंकण-मशीन सब अंग्रेजी टाइपराइटर है। पिछले वर्ष "36 चौरंगी लेन" नाम के चलचित्र को प्रसिद्धि प्राप्त हुई थी। इस चित्र में नायिका अपने रोगग्रस्त पिता को समझाती है कि भारत स्वतंत्र हो गया है। अब "King" नहीं है। मुझे लगता है कि भारत में उस पिता के समान लोग बहुत हैं जिनको पता नहीं कि भारत स्वतंत्र हो गया है। परन्तु मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि भारतीय लोगों का अंग्रेजी में शिक्षा पाना, प्रशासन का काम करना गलत है। अतीत में उत्तर भारत के लोगों ने अपनी भाषा को छोड़कर आर्य भाषा को अपना लिया था। भारतीयों ने अपनी भाषा को छोड़कर अंग्रेजी को अपनाया तो भी कोई असुविधा न होगी। जैसे आर्य भाषा ने बदलकर भारतीय आर्य भाषा का रूप लिया, वैसे ही English बदलकर Inglish होकर भारतीयों की मातृभाषा हो जाएगी।

हम विदेशी भारतीय भाषा के छात्र अपने स्वार्थ के लिए चाहते हैं कि हिन्दी पनपे, तमिल पनपे, कन्नड़ पनपे, भारतीयों को मानसिक स्वतंत्रता मिले। क्योंकि भारतीय भाषाओं के विकास से हमें अच्छा पद मिलेगा, समाज में प्रतिष्ठा मिलेगी। कई महीनों से कर्नाटक में कन्नड भाषा को शिक्षा व्यवस्था में अनिवार्य पहली भाषा बनाने के लिए और इसके विरुद्ध अनशन, बंध, आगजनी आदि हो रहे हैं। हम उत्सुकता से देख रहे हैं कि उसका परिणाम क्या होगा। घटनाक्रम का संक्षिप्त वर्णन नीचे प्रस्तुत है।

Scanned with CamScanner

आन्दोलन का घटनाक्रम

जिन लोगों को आन्दोलन की जानकारी नहीं है, उनके लिए आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास नीचे दे रहा हूं।

1979 तक संस्कृत भाषा को माध्यमिक शिक्षा में कन्नड, तमिल, तेलुगु, मराठी आदि के साथ पहली भाषा का स्थान था। संस्कृत के शिक्षण में व्याकरण पर जोर दिया जाता है। इसलिये अच्छे विद्यार्थियों के लिये 80 से 95 प्रतिशत अंक पाना सहज है। लेकिन कन्नड, तमिल आदि में यह असम्भव है। इसलिये कर्नाटक में शिक्षण की व्यवस्था विकृत हो गई। यदि पहली भाषा के रूप में संस्कृत, दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी, तीसरी भाषा के रूप में हिन्दी को लिया जाय तो कन्नड सीखने की गुंजाइश ही नहीं रहेगी। कन्नड साहित्य परिषन्तु ने 1976 के वार्षिक सम्मेलन में प्रस्ताव पारित किया कि पहली भाषा की सूची से संस्कृत को हटाया जाये। तीन वर्ष के पश्चात् देवराज अर्स की सरकार ने संस्कृत को पहली भाषा की सूची से हटा दिया। संस्कृत के समर्थक उच्च न्यायालय से स्थगन आज्ञा को निकलवाने में सफल हुए। देवराज अर्स के पतन के पश्चात गुण्डूराव मंत्री हो गये। उन्होंने तुरन्त ही घोषित किया कि संस्कृत पहली भाषा रहेगी। इस घोषणा के कारण मुख्यमंत्री को उग्र विरोध का सामना करना पड़ा। इसलिये उन्होंने प्राध्यापक गोकाक, बंगलूर विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति की अध्यक्षता में गोकाक समिति को नियुक्त किया। गोकाक समिति के सदस्यों को देखने से लोगों को ऐसा लगा कि समिति संस्कृत का समर्थन करेगी। संस्कृत के विरोधियों ने गोकाक समिति पर घेराव आदि द्वारा दबाव डालने की चेष्टा की। फलतः 1981 के जनवरी महीने में रपट निकली। इस रपट में कन्नड को अनिवार्य पहली भाषा का स्थान देने की सिफारिश की गई। गुन्डूराव घबराकर चुपचाप बैठा रहा। अन्त में गोकाक रपट के समर्थकों के दबाव में आकर गुण्डूराव ने घोषित किया कि गोकाक रपट को पूर्णतया स्वीकार किया जायेगा। इस पर राज्य सभा के सभासद एफ. एम. खान ने गोकाक रपट के विरुद्ध आन्दोलन को शुरू किया। धीरे-धीरे गृह युद्ध का रूप धारण करने लगा। घबराकर 19-4-1982 को सरकार ने एक समझौता के रूप में एक नया त्रैभाष्य-सूत्र घोषित किया। इस सूत्र में कन्नड गैर-कन्नड भाषियों के लिये पहली भाषा के रूप में अनिवार्य नहीं, परन्तु द्वितीय भाषा के रूप में अनिवार्य है। गैर-कन्नडियों ने इस सूत्र का स्वागत किया। गोकाक रपट के समर्थकों से मैसूर विश्वविद्यालय के प्राध्यापक एच. एम. नायक, साहित्य परिषद् के अध्यक्ष एच. पी. नागराज दूर रहे। परन्तु बंगलूर विश्वविद्यालय के प्राध्यापक एम. चिदानन्द मूर्ति, शिवरुद्रप्पा, कवि के. वी. पुट्टप्पा आदि ने घोषित किया कि जब तक सरकार गोकाक रपट को अक्षरशः न स्वीकार करेगी, संग्राम जारी रखेंगे। अन्त में गोकाक रपट के समर्थकों के दबाव में आकर गुण्डूराव ने घोषित किया कि कन्नड पहली भाषा होगी। अल्प-संख्यकों ने फिर संग्राम शुरू किया, जो अब तक जारी है।

कन्नड प्रेमियों के कर्तव्य

जैसे मैंने ऊपर लिखा है, कर्नाटक में कन्नड भाषा का उपयोग, बोलचाल और साहित्य तक ही सीमित है। न्यायालय और प्रशासन की भाषा अंग्रेजी ही है। महानगरों में अच्छे प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय अंग्रेजी माध्यम से ही पढ़ाते हैं। प्राध्यापक एम. चिदानन्दमूर्ति के अनुसार बंगलूर में एक भी कन्नड माध्यम का अच्छा विद्यालय नहीं है, इसलिये वे अपने बच्चे को अंग्रेजी माध्यम विद्यालय में भेजते हैं। बंगलूर विश्वविद्यालय के एक कन्नड व्याख्याता ने मुझसे कहा, "मैंने दो वर्ष तक अपनी बेटी को विश्वविद्यालय की पाठशाला में भेजा

Scanned with CamScanner

बाद में पता लगा कि उसको कुछ भी सिखाया नहीं गया। इसलिये अब मैं उसको अंग्रेजी माध्यम की गैर सरकारी पाठशाला में भेज रहा हूं। उसके दो वर्ष व्यर्थ गये।"

यह बात स्पष्ट है कि कर्नाटक में कन्नड भाषा की दुर्दशा के लिए कन्नडिग ही उत्तरदायी हैं, अल्प-संख्यक नहीं। गोकाक रपट के समर्थक खुद कन्नड का उपयोग न करके भी दूसरों को उपयोग करवाना चाहते हैं। कन्नड की दुर्दशा का कारण तमिल नहीं, उर्दू नहीं, मराठी नहीं, अंग्रेजी ही है। यदि कोई भारतीय भाषा के विकास के लिए लड़ना चाहेगा तो "अंग्रेजी हटाओ" का नारा लगाना चाहिए। "गोकाक वरदि जारिगे बरलि" गोकाक रपट लागू हो या नहीं। यद्यपि गोकाक रपट के समर्थकों में कइयों ने कहा कि अंग्रेजी के स्थान पर कन्नड का उपयोग होना चाहिए किन्तु यह यत्र-तत्र ही रह गया।

उपर्युक्त परिस्थिति से मैं नीचे दिये हुए निष्कर्ष पर पहुँचा हूं।

कन्नड की दुरवस्था का कारण निराशा थी। मुख्यमंत्री गुण्डूराव की अदक्ष भाषा नीति ने निराशा को क्रोध में और क्रोध को विस्फोट में परिवर्तित किया। गोकाक रपट वाले आन्दोलन को कन्नडिगों का सहयोग उत्तर कर्नाटक में अधिक, और दक्षिण कर्नाटक में कम इसलिए मिला कि कन्नडिगों को गोकाक रपट जारी होने से कोई नुकसान नजर न आया। यदि उनसे कहा गया होता "अंग्रेजी छोड़कर कन्नड का उपयोग करो" तो जरूर अधिक-तर लोग इसका विरोध करते। देश-प्रेम के लिए अपनी नौकरी गंवाने को कितने लोग तैयार होंगे ? अंग्रेजी माध्यम से पढने से अच्छे विश्वविद्यालय में जगह मिलेगी, अच्छी नौकरी मिलेगी। सुन्दर पत्नी मिलेगी। विदेश जाने का मौका भी मिल सकता है। यदि गोकाक समर्थक सचमुच कन्नड प्रेमी होते तो गोकाक रपट के पहले ही विद्यालयों में, न्यायालयों में, सरकारी कार्यालयों में कन्नड का उपयोग करवाने के लिए मैदान में उतरे होते। मुझे लगता है कि सच्चे कन्नड प्रेमी इने-गिने हैं। के. वी. पुट्टप्पा सच्चे कन्नड प्रेमियों में से एक हैं क्योंकि वे अपने बच्चे को कन्नड माध्यम के विद्यालयों में भेज रहे हैं। एम. चिदानन्दमूर्ति भी सच्चे कन्नड-प्रेमी होंगे क्योंकि सच्चे शोधक होते हुए भी उन्होंने अपना शोधकार्य छोड़कर अपना शत प्रतिशत कन्नड आन्दोलन को समर्पित कर दिया है।

यदि गोकाक समर्थक सच्चे कन्नड प्रेमी हों, तो गोकाक रपट वाले आन्दोलन को व्यापक कन्नड आंदो-लन का पहला कदम समझ कर नीचे दिये हुए लक्ष्य के लिए आन्दोलन को जारी करना चाहिए।

1. सभी विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम कन्नड होना चाहिए।

2. न्यायालयों और सरकारी कार्यालयों की भाषा कन्नड होना चाहिए।

3. 1 के लिए यदि विरोध का सामना करना पड़े तो विज्ञान के क्षेत्र में जैसे चिकित्सा, शिल्प-शास्त्र, इत्यादि के कन्नड माध्यम के अच्छे विद्यालयों की स्थापना करके दिखाना चाहिए। कन्नड उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी से कम नहीं है। यदि गोकाक समर्थक इस दिशा में आगे नहीं बढेंगे तो स्वीकार करना चाहिए कि उन्होंने अल्पसंख्यकों से अन्याय किया है। प्राध्यापक एम. चिदानन्दमूर्ति ने कहा कि गोकाक रपट वाला आन्दोलन शुरू है। शिक्षा के माध्यम का आन्दोलन शुरू होगा। आशा है गोकाक समर्थक मैदान में डट कर लडेंगे। भारत में जब मैं पूछता हूं "आप क्यों भारतीय भाषा में विज्ञान नहीं पढाते" जवाब मिलता है "भारतीय भाषा अभी तक इतनी विकसित नहीं है। सरकार ने विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली बनाने के लिए कोशिश नहीं की।" इन लोगों का तर्क यह है कि वे तैरना आने के बाद ही पानी में उतरेंगे। जब तक पानी में न उतरें, तब तक तैरना नहीं आयेगा। पारिभाषिक शब्दों के लिए सरकार की अपेक्षा करना बहाना मात्र है। अमरीका में, जापान में वैज्ञानिक,

Scanned with CamScanner

पत्रकार, और साहित्यिकार अपने-अपने क्षेत्रों में नये शब्द बनाते आये हैं। कोई सरकार-कृत शब्दावली की अपेक्षा नहीं करता। मैं भी जापानी में, जर्मन में, अंग्रेजी में नये शब्द बना चुका हूं। भारतीय भाषाओं में भी बनाने को तैयार हूं।

एक और बहाना यह है कि कन्नड में, हिन्दी में अच्छी पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध नहीं है। माध्यम के तीन पक्ष हैं :—

1. पाठ्य पुस्तकें कौन-सी भाषा में है
2. शिक्षक कौन-सी भाषा में बोलते हैं
3. परीक्षा पत्र कौन-सी भाषा में लिखते हैं

नम्बर एक के लिए अंग्रेजी पुस्तक का उपयोग कम से कम अंशतः आवश्यक है और आवश्यक ही रहेगा। पाठ्य पुस्तकें अंग्रेजी में होते हुए भी नम्बर दो और तीन के लिए भारतीय भाषा का उपयोग करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

[यह निबंध तृतीय अंक के लिए लिखा गया था परन्तु विलम्ब से प्राप्त होने के कारण इस अंक में प्रस्तुत है। सुना है कि कन्नड आन्दोलन अभी भी जारी है। —सम्पादक]

Scanned with CamScanner

व्यंग्य

इन्डियन-जैपनीज़ माई माई (एक कल्पित वार्तालाप)

आकिरा ताकाहाशि

भारत-जापान मैत्री संघ के एक मुख्य सदस्य विश्वनाथ शुक्ल जी (बी०ए०, एम०ए०, पी०एच०डी०, और न जाने क्या ए०बी०सी०) पिछले दिन जापान पधारे थे। उनके स्वागत के लिए संघ के जापानी सदस्यों के द्वारा एक समारोह आयोजित किया गया। उस समारोह में एक जापानी लड़का भी शामिल था। उसने अपने बारे में बताया कि किसी विश्वविद्यालय में हिन्दी पढ़ता हूं, और शुक्ल जी के दर्शन पाकर बात करना चाहता हूं। संघ के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं था, लेकिन शुक्ल जी इनकार करने वाले नहीं थे।

छ० : नमस्कार।

शु० : आइए। आइए। बैठिए। आई अम वेरी ग्लैड टू सी यू। यह बहुत खुशी की बात है कि यू आर स्टडिंग हिन्दी लैन्ग्विज। वेरी गुड।

छ० : जापान-भारत की मैत्री के लिए जो सेवा आप करते आये हैं, उसके लिए मैं भी अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूं।

शु० : कहाँ की सेवा ? आई अम डूइन्ग ओन्ली फोर माई ज्योई। लेकिन, हाँ, सेवा, आपने ठीक ही कहा। आई हैव बीन वार्किन्ग फोर द फ्रेन्डशिप बिट्वीन इन्डिआ एण्ड जैपान फोर मोर दैन थार्टि इयार्ज।

छ० : क्षमा कीजिएगा। मैं ठीक-ठीक अंग्रेजी समझ नहीं सकता हूं। यदि आपत्ति न हो, और हैं भी आप हिन्दी भाषी प्रदेश के, कृपा करके हिन्दी में बोलियेगा।

शु० : यस, नो प्रोब्लेम। अच्छा, आप इन्गिलश नहीं समझते हैं ?

छ० : जी हाँ। मैं जापानी हूं। अंग्रेज़ नहीं।

शु० : सो तो सही। हूं। अच्छा, यह बताओ कि तुम हिन्दी क्यों सीखते हो ? हिन्दी सीखने में रुचि कैसे हुई ? भारत के प्रति क्यों इतना लगाव है कि हिन्दी सीखी ?

छ० : आपने एक साथ तीन प्रश्न किये हैं। हिन्दी सीखने से पहले एक दिन मुझे भारतीय संस्कृति पर लिखी गई एक किताब मिली, जिसमें—

शु० : अच्छा, तुमने राधाकृष्णन् जी की पुस्तक पढ़ी है ?

छ० : जी नहीं, नाम तो अवश्य सुना है, लेकिन—

शु० : अवश्य पढ़ो। बहुत ही अच्छी पुस्तक है। इंडियन सिविलाइजेशन हैज़ मेइन्टेइन्ड इट्स कोन्टिन्यूइटी विच कान्ट बी सीन इन एनि अदर सिविलाइजेशनज् ओव द वर्ल्ड। कोन्टिन्यूइटी, समझते हो ? एक अविच्छिन्न

Scanned with CamScanner

विचार-धारा। ग्रीस और रोम को देखो। आई नो दैट देअर सिविलाइजेशन कान्ट बी कोम्पेअरड विद अवर इन्डियन सिविलाइजेशन इन मेनी पोइन्टस एण्ड इन सम पोइन्टस दे आर स्यूपिरियर टू अस, टू डू दे जस्टिस। लेकिन आज उसे देखने के लिये तुम्हें म्यूजियम में जाना पड़ेगा। इन अदर वार्डज़, उनकी संस्कृति और सभ्यता अब नष्ट हो चुकी है। म्यूजियम में मूर्तियाँ बनकर ही रह गई है।

छ० : मेरे विचार में जो चीजें आज संग्रहालय में ही होनी चाहिये, वे अब भी भारत में सड़कों पर दिखाई देती हैं।

शु० : मतलब ?

छ० : भूख, भिखारी, जाति-व्यवस्था, दास-प्रथा वगैरह।

शु० : अच्छा, यू आर टू पेसिमिसटिक, है न ? मैं तुम्हें समझा देता हूं। वर्ण-व्यवस्था का अपना बहुत पुराना इतिहास है। इट्स एन इनटिग्रल पार्ट ऑफ अवर कल्चर।

छ० : आप या तो हिन्दी में बात कीजियेगा या तो बिलकुल अंग्रेजी में। मिला के बोलने से दोनों भाषाएँ बिगड़ जाती हैं।

शु० : ऐ ? अँग्रेजी में मैं कब बोला। आई अम स्पीकिन्ग ओन्लि इन हिन्दी।

छ० : अच्छा, तो अँग्रेजी में बोलियेगा।

शु० : नहीं, नहीं। तुम तो अँग्रेजी नहीं समझते हो। हाँ, मैं यह कहने वाला था। जब आर्य लोग भारत में आये, तब उन्हें समाज में कोई ठोस, कोई फार्मथीअरि की आवश्यकता सूझी, जिससे समाज व्यवस्थित रहे। हमारे पूर्वजों ने यह अच्छा तरीका इन्वेन्ट किया है, वह है वर्ण-व्यवस्था जिसमें समाज अनावश्यक स्ट्रग्ल से बच पाया ! समझे ? अच्छा। आई शो यू वन एक्सलेन्ट इगजाम्पल। न्यूयार्क में एक दिन रात को बिजली पांच घण्टों के लिये चली गई। ओन्लि फाइव आउअज। सोचो। इस बीच कितने क्राइम हुए। मर्डर, चोरी, आगजनी। बहुत। यही अमरीकी संस्कृति है जो द स्ट्रगल फोर दि इग्जिस्टेन्स पर आधारित है।

छ० : लेकिन किसी देश में तो बिजली चमकती रहने पर भी ऐसी गड़बड़ होती है।

शु० : होगी ! अच्छा, तुम ने भूख की बात कही। अब यह भी समझा देता हूं। आदमी बिना खाना खाये जी नहीं सकता है। आई अडमिट अज मच। बट दिस इज ओल्सो ट्रू दैट मैन शैल नोट लिव बाई ब्रेड अलोन।

छ० : जरा मेरी बात भी सुनियेगा।

शु० : हाँ, हाँ, क्यों नहीं। क्या कहना चाहते हो ? कहो। कहो।

छ० : संस्कृति जो आप कहते हैं, वह—

शु० : अच्छा, तुम ने मेरी बात अभी समझी नहीं। सुनो। बताता हूं। अमरीका में—

छ० : जरा—

शु० : भई, तुम मेरी बात पूरी होने दो। बीच में दूसरों की बात काटना अच्छा नहीं है।

छ० : जो, सचमुच। कितना बुरा लगता है, आप ही ने मुझे सिखाया है आज।

शु० : कोई बात नहीं। इस तरह सीखते जाओ। यू आर अ यन्ग मैन जो अब नहीं सीखोगे, तो आखिर कब सीखोगे। मैं यह बता रहा था। अमरीका में अगर आदमी दो दफा खाना ठीक नहीं खा सके, तो वो क्या करेगा। हत्या करेगा, चोरी करेगा, सब कुछ करेगा। लेकिन इण्डिया में खाना मिले, न मिले आदमी अपने धर्म अपनी संस्कृति को छोड़ेगा नहीं।

छ० : जहाँ दो दफा खाना नहीं मिलता, वहाँ संस्कृति होती है ? अगर होती तो भी इससे क्या लाभ ?

शु० : लाभ केवल पैसे का नहीं, लाभ केवल खाने का नहीं। अच्छा, मैं एक बहुत अच्छे आदमी से तुम्हारा परिचय करा दूँगा, जो वित्त मंत्री जी के चाचा जी के मामा जी के साला जी लगते हैं। बहुत बड़े स्कालर हैं, तुम्हें

Scanned with CamScanner

अच्छी तरह से समझा देंगे।

छ० : वे साला जी आपके कौन लगते हैं ?

शु० : मित्र हैं। और तुम ने शिवप्रसाद जी का नाम तो सुना होगा, जिनकी पहुँच बहुत बड़े-बड़े आदमियों तक है। वे मेरा कहा टाल नहीं सकते हैं। उनसे भी तुम्हारी बात करूँगा।

छ० : वे किस के साला जी हैं ?

शु० : सब के। मतलब सब लोग उनका आदर करते हैं। वे तुम्हारी मदद खूब करेंगे।

छ० : आपकी मेहरबानी है।

शु० : कोई बात नहीं। और कोई भी मदद तुम मुझसे चाहते हो, तो कहना। संकोच मत करो। मुख्यमंत्री तक मुझ से सलाह लेते हैं। थोड़े दिन पहले भी सुबह सुबह उनका टेलिफोन आया था। वे बहुत चिंतित थे। जानते हो, क्यों ? वे कहते थे कि इस साल प्रदेश में भूसे की पैदावार अच्छी नहीं है। ऐसा चलता रहा, तो अगले साल तक प्रदेश भर के घोड़े, बैल और गधे भूखों मर जायेंगे। क्या उपाय करना चाहिये। मैंने कहा, गधों के मरने से आप इतना घबराते क्यों हैं, मानो कोई अपने सगे भाई मर रहे हों। आप बेकार चिंता कर रहे हैं। ऐसा कीजिये। अब जितना भूसा होगा, वे सब पहले घोड़ों और बैलों को खिलवाइए और गधों को मरने दीजिये। गधे सब मर जायेंगे, तब उनकी खोपड़ियाँ तोड़-तोड़कर भूसे निकलवाइये। एक तरफ गधे सब मरेंगे, दूसरी तरफ भूसे भी हाथ आयेंगे। इसको कहते हैं, एक पंथ दो काज। मंत्री जी बहुत ही प्रभावित हुए। उन्होंने यहाँ तक कहा कि आप ही को मंत्री का पद मिलना चाहिये था। राजनीति से आपका बाहर रहना जनता के लिए नुकसान की बात है। मैंने कहा, न, न, ऐसा मत कहिये। आई एम सैटिसफाइड विद माई क्वाइएट लाइफ बाई नेचअर। पोलिटिक्स-बोलिटिक्स में मेरी कोई रुचि नहीं है। बट, हाँ, इफ यू लाइक ओर यू नीड, यू कान कोन्सल्ट विद मी एट एनि टाइम। यू आर वेलकम। ऐसा है।

छ० : एक बात नहीं समझ आती है। खोपड़ी में भूसे क्यों ?

शु० : यही तो हिन्दी की विशेषता है। आँखों में सरसों फूल सकता है, पेट में चूहा दौड़ सकता है। खोपड़ी में भूसे का होना क्या बड़ी बात है ?

छ० : जी, आपका कहना बिलकुल सही है।

शु० : सही ही कहता हूं। झूठ क्या चीज है, मैं जानता भी नहीं। वैसे हमारी नजर में झूठ और सच में कोई अन्तर नहीं है। मतलब तर्क से है, सिद्धान्त से है, लोजिक से है। लोजिक परफेक्ट है, तो वह सच है। लौजिक इम्परफेक्ट है, तो वह गलत हो सकता है, पर झूठ नहीं।

छ० : अगर कोई चोर यह कहेगा कि मैंने चोरी नहीं की, तो यह झूठ नहीं है ?

शु० : यदि वह चोर चोरी को चोरी नहीं समझता है, तो वह सच कहता है कि मैंने चोरी नहीं की।

छ० : चोरी तो चोरी ही है।

शु० : नहीं। इट इज नोट इम्पोर्टेन्ट फोर अस हिन्दू वाट इज द फैक्ट। क्या कहें, इसमें महत्व नहीं। किस तरह कहें, यही हमारे लिये इमपोर्टेन्ट है। हम हमेशा इसी प्रयास में हैं कि अपना अपना लोजिक, अपना अपना सिद्धान्त कायम रहे, जिससे कि वास्तविकता की व्याख्या की जा सके। संसार में अगर एक मानव भी न रहता, तो वास्तविकता होती। पर मानवों के बीच जिसको वास्तविकता कहा जाता है, वह हमारी व्याख्या के है। हमारे लिए इक्सप्रेशन ही सब कुछ है। ईसाई लोगों के लिये यह सब भगवान की ओर से निश्चित किया गया है कि सच क्या है और झूठ क्या है। हमारे लिये भी भगवान् जिसको सच कहेगा, वह सच है, जिसको झूठ कहेगा, वह झूठ है। पर वह भगवान कहीं बाहर या आसमान में नहीं रहते, वह हमारे अन्दर

Scanned with CamScanner

ही रहते हैं। या यों कहें कि हम खुद एक-एक भगवान् हैं। ईसाई लोग फैक्ट की व्याख्या को मसीह से मांगते हैं, हम अपने-अपने अन्दर के भगवान् से माँगते हैं। यहाँ सच और झूठ का प्रश्न नहीं उठता है। सब कुछ सच है। हम यूनिवर्सेलिटी को एक इन्डिविडयुअल के अन्दर यानी अपने अन्दर देखते हैं। मानवों के बीच में नहीं देखते हैं। संसार की सब चीजें इसलिये रेलेटिव हैं कि हम इन्डिविडयुअल में ऐबसेल्यूटिस्ट हैं। वी आर द ग्रेटिस्ट रेलटिविस्ट ओफ द वर्ल्ड अज अ सोशल बीइन्ग, बट अज अन इन्डिविडयुअल वी आर द ग्रेटिस्ट ऐबसल्यूटिस्ट ओल्सो। इस माने में हम कहते हैं कि भगवान् कृष्ण हो, या राम हो, सब हमारे अन्दर रहते हैं। जब हम पूजा करने मन्दिर जाते हैं, तब हम अपने आपसे मिलते हैं और अपनी पूजा करते हैं।

छ० : तो आप भी भगवान् शुक्ल जी हैं ?

शु० : बिल्कुल।

छ० : मैं कह नहीं सकता कि कहाँ तक आपकी बात समझ सका।

शु० : कोई बात नहीं। समझ का घर दूर है। यह कोई पाप नहीं कि ऊँची बातें समझ नहीं सकते। अच्छा, मैं लाभ की बात कर रहा था। यू मस्ट सी फ्रोम अनदर पोइन्ट ओफ व्यू। जैपनीज इन्डस्ट्री ने बहुत बड़ी, अद्भुत उन्नति की है। अब उसका जी० एन० पी० रूस और अमरीका को छोड़ दुनिया में सबसे बड़ा है। लेकिन मैं तो कहूंगा, यह सब प्राइस की उन्नति है। लेकिन भारत की संस्कृति प्राइस की नहीं है, वैल्यू की है। समझे ? ठीक है, सुनो। बताता हूं। प्राइस इज वन थिंग एण्ड वैल्यू इज क्वाइट अनदर थिन्ग। कारखाने में कैमरा जो बनता है, उसको खरीदकर तुम खुश हो जाओगे। पर वह खुशी प्राइस की खुशी है, मटिअरिटी की खुशी है। लेकिन अच्छी कविता पढ़कर जो खुशी मिलती है, वह वैल्यू की ज्योई है। यानी स्पिरिच्युअल ज्योई है।

छ० : पैसा देख कर जो खुशी मिलती है, वह प्राइस की ज्योई है या वैल्यू की ज्योई ?

शु० : तुम ने समझा नहीं। अच्छा, एक बात सुनो। जापान के बारे में लोगों का विचार यह है कि जैपनीज नकल करने में स्किलफुल हैं, यानी सिद्धहस्त है। हिन्दी समझते हो न ? इफ यू विल फाइन्ड इट डिफिकल्ट टू फोलो माई प्युअर हिन्दी, सो कहना।

छ० : शुक्रिया। लेकिन हिन्दी को हिन्डी कहें, तो आपकी हिन्डी और प्युअर हो जाएगी।

शु० : तुम तो हिन्दी की चिन्दी निकालते हो। यह आदत तुम्हारी कतई पसंद नहीं मुझे। मैंने कब द को ड और ड को द कहा। द और ड का अलग प्रनाउंन्सिएशन है, यह तो बच्चे भी जानते हैं।

छ० : मुझे लगता है कि बच्चे ही जानते हैं।

शु० : ऐं ? क्या कहा तुम ने ?

छ० : कुछ नहीं। आप गलत समझ रहे हैं। मैं यह कहना चाहता था कि बीच-बीच में आप एकदम से इतनी प्युअर हिन्दी बोलने लगते हैं कि मेरे सिर में चक्कर आने लगता है। लेकिन लगभग ठीक-ठीक मैं समझता हूं और यदि हिन्दी का बहुत ही कठिन शब्द आये, तब अवश्य आपसे पूछूंगा मैं।

शु० : ठीक है। अच्छा, लोग यह कहते हैं कि जैपनीज नकल करते हैं, पर उनमें ओरिजिनेलिटी कम है। आई डोन्ट अग्री टू दिस ओपिनियन माईसेल्फ। पर लोगों की मान्यता यह है। कार, कैमरा, घड़ी, वह भी बढ़िया से बढ़िया, सीको की तरह, बनते हैं खूब। लेकिन ये सब पाश्चात्य संस्कृति की उपज है। जापान की ओरिजिनेलिटी की उपज नहीं है।

छ० : तो बताइयेगा, थाइलैंड में क्या ओरिजिनेलिटी है जो जापान में नहीं है ? और कोरिया में क्या ओरिजिनेलिटी है जो जापान में नहीं है। आस्ट्रेलिा में क्या ओरिजिनेलिटी है, जो जापान में नहीं है। सीधी सी बात है।

Scanned with CamScanner

अगर इन देशों में यदि ओरिजिनेलिटी है, तो जापान में भी होगी। यदि इन देशों में ओरिजिनेलिटी नहीं है, तो जापान में भी नहीं होगी। पर इन सब देशों के पास यदि ओरिजिनेलिटी नहीं है, तो संसार के किस देश के पास ओरिजिनेलिटी है ? आप शायद यह कहेंगे कि जापानी ने पहले चीनियों की नकल की थी अब अमरीकियों की नकल करते हैं। तो मैं कहूंगा कि आर्यों ने भी द्रविडों की कम नकल नहीं की। आखिर ओरिजिनेलिटी से आपका क्या मतलब है ?

शु० : ओरिजिनेलिटी से मेरा मतलब है, अपनी फिलोसोफी है और अपना प्रिन्सिपल है। इन्डिया ने जापान को बुद्धिज़म दिया। दुनिया भर को फिलोसोफी दी। यू कान्ट इमैजिन हाउ फार इन्डियन फिलोसोफी हैज इन्फ्लुअन्सड द थोट्स ओव द वर्ल्ड सिन्स टाईम इमिमोरिअल। जैपनीज रेडियो बहुत अच्छा बनाते हैं। वट दे हैव नो देअर ओउन फिलोसोफी एण्ड प्रिन्सिपल। हमारी फिलोसोफी, संस्कृति और इतिहास के सामने सोनी का रेडियो कितनी छोटी चीज है।

छ० : लेकिन सम्राट अशोक के जमाने में अगर सोनी का रेडियो होता, तो वे अवश्य भारत-जापान मैत्री संघ का सदस्य बन जाते।

शु० : तुम भी अजीब कहते हो ? उस जमाने में रेडियो कैसे ?

छ० : तो रेडियो को सोना कहिए या हीरा। एक ही बात है।

शु० : रेडियो हो या सोना हो, उससे हमारा कोई मतलब नहीं है। बात संस्कृति की है। जैपनीज ने घड़ी या रेडियो को संस्कृति समझ रखा है, जोकि बिल्कुल गलत है। हमारे लिए संस्कृति कुछ दूसरी चीज है जो कारखानों में बनती नहीं और घड़ी या कैमरे के दाम बिकनेवाली भी नहीं। जैपनीज के मित्र की हैसियत से मैं सलाह यह देता हूं कि नकल करते रहने से कोई स्पिरिट्युअल प्रोग्रेस नहीं हो सकेगा। वेद में भी लिखा है "नकल रा चे अकल" यानी नकल में अकल की क्या जरूरत।

छ० : आप अपने को जापानियों का मित्र कहते हैं। लेकिन मान लीजिये हमारे पास कोई रेडियो घड़ी नहीं होती, फिर भी हमारे साथ दोस्ती करना चाहेंगे ? सच पूछिये तो यदि आपके स्थान पर मैं होता तो शायद ही मैं चाहूंगा।

शु० : वेद में यह भी लिखा है "जइसन छिनरी आप छिनार ओइसन जाने सभ संसार" हमारी फिलोसोफी ने भूख तक को पोजिटिवली अपनाया है। तुम्हें महात्मा गाँधी जी का स्मरण करना चाहिए। जिनके लिए भूख कुछ भी नहीं है, उनके लिए मटिअरिअलिटी का अर्थ ही नहीं रहता। जैपनीज अपनी पुरानी संस्कृति को छोड़ रेडियो के पीछे पागल हो गये हैं। इसका नतीजा यह हुआ कि जापान इम्पेरिअलिज्म का शिकार हो गया और सारा एशिया जैपनीज इम्पेरिअलिज्म का शिकार। यह हुई बहुत बड़े दुःख की बात।

छ० : वह बड़े दुःख की बात थी। इसमें कोई संदेह नहीं। लेकिन यह भी सच था कि एशिया में अगर एक देश भी गोरों का सामना न करता होता, तो आज हम सब की क्या हालत होती। ज़रा इस पर भी ध्यान दीजिए।

शु० : लेकिन जैपनीज इम्पेरिअलिज्म के कारण कितने लोग मारे गये थे।

छ० : किसी लड़ाई में मनुष्यों का मर जाना स्वाभाविक है।

शु० : जैपनीज सैनिकों ने किसानों, व्यापारियों, बूढ़ों और औरतों को भी यानी निर्दोष, निर्बलों को भी क्रूरता से मार डाला है।

छ० : जो लोग उस अत्याचार में शामिल थे, उनके पास माफी मांगने के लिए शब्द भी नहीं होगा। बल्कि जो माफी मांग रहे हैं या पछतावे के आंसू बहाते हैं, वे सब दिखावे के लिये ही करते हैं। सचमुच जो अपने किये

Scanned with CamScanner

का भोग रहे हैं, वे चुप्पी साधने के सिवा कुछ नहीं कर सकेंगे। उनकी ओर से मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि उस प्रकार का अत्याचार किस ने नहीं किया, कौन नहीं करता है और आगे कौन नहीं करेगा।

शु० : मैं तो कभी नहीं करूंगा। सोच भी नहीं सकता हूं। इस तरह के अत्याचार की खबरें पढ़ने भर से सिहर उठता हूं। यह जो तुम लोगों ने लड़ाई में किया है, वह मानवता के प्रति चुनौती है, मानवता का घोर अपमान है।

छ० : मुझ से बड़ी गलती हुई होगी, तभी तो आप इतना गुस्सा कर रहे हैं। अब आज्ञा दीजिये। मैं चलता हूं।

[यह कपोल-कल्पित वार्तालाप तीसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर लिखा गया था। लेखक के अनुसार इस वार्तालाप का अभिप्राय भारतीय जीवन-दर्शन या संस्कृति पर आक्षेप करना नहीं है वरन हिन्दी की आज की स्थिति पर व्यंग्य करना है।—सम्पादक

Scanned with CamScanner

कहानी में आधुनिकता का प्रतीक : भिक्षावृत्ति

योशिआकि सुज़ुकि

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आधुनिकता के विषय में तरह-तरह की कहानियाँ लिखी गई हैं। भारत के बदलते समाज के पहलुओं पर प्रकाश डालकर प्रेमचन्दोत्तर नई पीढ़ी के कहानीकारों ने कई प्रकार की रचनाएँ प्रकाशित कीं। आधुनिक युग में प्रवेश होने के समय में, अर्थात् 18वीं शती के उत्तरार्द्ध से 19वीं शती के प्रारम्भ में दुनिया भर के लोगों के मन में कुछ भी संदेह पैदा नहीं हुआ था कि आधुनिकता अथवा यंत्रीकरण, शिल्प-विज्ञान का विकास मानव समाज की उन्नति एवं कल्याण के लिए जरूरी है। 18वीं शती की औद्योगिक क्रांति ने दुनिया भर के लोगों को बहुत प्रभावित किया था। उसका प्रभाव भारत में भी पड़ा, परन्तु सही रूप में आधुनिकता का भारतीयकरण स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से शुरू हुआ और भारतीय समाज तेज गति से बदलने लगा है। इस बदलते समाज को ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए, तो स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिकता ने परम्परागत भारतीय अध्यात्म-मानव संबंध को तोड़ दिया। आधुनिक पूँजीवादी प्रगति ने आध्यात्मिक लोगों को वस्तुवादी (भौतिकवादी) व्यक्ति में बदल दिया। पहले लोगों का संबंध धर्म अथवा परम्परागत रीति-रिवाज के आधार पर बनाया गया था, अब इसका संबंध धन, वस्तु के आधार पर बनाया जा रहा है। अर्थात् लोगों का आपसी संबंध आर्थिक शक्ति के आधार पर होने लगा। परम्परागत जाति-प्रथा के अलावा आधुनिकता अथवा पूँजीवादी विकास ने और एक वर्ग-व्यवस्था बना दी, वह है आर्थिक वर्ग-भेदभाव। पूँजीवादी विकास ने लोगों को बुर्जुआ वर्ग, मध्य-वर्ग और निम्न वर्ग के तीन वर्गों में बाँट दिया और उसका विकास जितनी गति से होता है उतनी ही गति से तीनों वर्गों के बीच की दूरी बढ़ जाती है। फिर भी यह आर्थिक वर्ग होने के नाते स्थाई नहीं है। मध्य-वर्ग के लोग बुर्जुआ वर्ग में शामिल हो सकते हैं। क्योंकि यह वर्ग आर्थिक शक्ति के आधार पर बनाया गया वर्ग है।

आधुनिक युग में जीने वाले सब आधुनिक जीवन नहीं जीते। आधुनिकता के कारण परिवर्तनशील समाज में बुर्जुआ वर्ग के लोग अर्थात् अमीर लोग खूब आधुनिक जीवन जीते हैं और मध्यवर्ग के लोग इस बदलते परिवेश में अपने स्थान एवं अस्तित्व को सुरक्षित रखने के लिए प्रयत्नशील हैं, पर निम्न वर्ग के लोग आशाहीन जीवन जीते हैं और अपना अस्तित्व खो बैठे हैं। सिर्फ जीने के लिये हाँफते हैं। उन लोगों के सामने घटित कई सामाजिक परिवर्तन उन लोगों की उपेक्षा से ही होते हैं अर्थात् निम्न वर्ग के लोग जानते हैं कि उन लोगों की आंखों के सामने घटित सामाजिक परिवर्तन उनके लिये नहीं हैं। मध्यवर्ग के लोग निम्न वर्ग के लोगों के प्रति सहानुभूति जरूर दिखाते हैं पर उन लोगों के निकट तक उतरकर एक साथ संगटित नहीं हो पाते। यही परिस्थिति आज के साहित्य में भी देखी जा सकती है। प्रस्तुत लेख में हिन्दी कहानियों में अभिव्यक्त आधुनिक व्यवसाय पर विचार किया जायेगा।

Scanned with CamScanner

भारतीय पाठकों में से कुछ लोग अवश्य कहेंगे कि भारत में भिक्षावृत्ति की परम्परा प्राचीन काल से है। इस निबन्ध का लेखक इस मत से सहमत है परन्तु आधुनिकता के कारण जिन लोगों को काम छोड़ना पड़ता है और जीने के लिये भीख मांगनी पड़ती है, उस दृष्टि से यह व्यवसाय आधुनिक युग में शुरू हुआ। दूसरे शब्दों में भीख माँगना आधुनिक युग का प्रतीक कहा जा सकता है। इस भीखमंगी को विषय में रखकर कई कहानीकारों ने कहानियाँ लिखीं। निराला जी की "देवी" अमरकांत की "जिन्दगी और जोंक", गंगाप्रसाद विमल की "मैं भी" आदि। इन कहानीकारों ने निम्न वर्ग के प्रति जिज्ञासा और सहानुभूति अभिव्यक्त की और यथार्थपूर्ण ढंग से निम्न वर्ग के लोगों का जीवन प्रस्तुत किया है, परन्तु महसूस जरूर होता है कि कहानीकार सिर्फ तटस्थ रहते हैं। हाँ, हमें यह भी मालूम है कि अधिकांश हिन्दी कहानीकार मध्यवर्ग के लोग हैं। इसलिए निम्न लोगों की जिन्दगी यथार्थपूर्ण ढंग से लिखते हुए भी इन लोगों की धरती तक उतरना असम्भव प्रतीत होता है।

इस निबंध का उद्देश्य भिखमंगी के विषय में उपरोक्त तीन कहानियों को तुलनात्मक दृष्टि से पढ़कर कहानीकारों के विचार और युग की सामाजिक परिस्थिति की खोज करनी है।

पहले अमरकांत की कहानी "जिन्दगी और जोंक" और गंगाप्रसाद विमल की कहानी "मैं भी" में चित्रित भिखमंगी को तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए। दोनों कहानियों में चित्रित भिखारी रोगी हैं, एक हैजे से पीड़ित है, दूसरा चर्म रोग से। परन्तु दोनों भिखारियों की पृष्ठभूमि में स्पष्ट अन्तर है। "जिन्दगी और जोंक" में चित्रित रजुआ पहले भिखारी है और बाद में हैजे का शिकार। रजुआ को मुहल्ले के लोगों से परिचित होकर मुहल्ले के लोगों के घर का छोटा-मोटा काम मिल जाता है और बाद में हैजे से पीड़ित होते हुए भी जीने का प्रयास करता है। रजुआ भिखारी के जीने के प्रयास को देखकर पात्र "मैं" चकित हो जाता है। इस कहानी में लेखक ने निम्नवर्ग के लोगों के प्रति मध्यवर्ग के लोगों की सहानुभूति प्रस्तुत की है और साथ ही निम्नवर्ग के लोगों के जीने के लालच पर मध्यवर्ग के लोगों का आश्चर्य व्यक्त किया है। क्योंकि मध्यवर्ग के लोगों को मालूम है कि उसे मरने तक इस दुनिया में कष्टमय जीवन ही जीना पड़ेगा फिर भी जीने का प्रयास क्यों। कहानी के अंत में इसलिए पात्र "मैं" को सोचना पड़ा कि जोंक वह था या जिन्दगी, वह जिन्दगी का खून चूस रहा था या जिन्दगी उसका—और पात्र "मैं" स्वयं तय नहीं कर पाया था क्योंकि पात्र "मैं" रजुआ जैसे निम्नवर्ग का आदमी नहीं था। इस कहानी का पात्र "मैं" मध्यवर्ग का प्रतिनिधि है, वह सिर्फ तटस्थ रहता है।

गंगाप्रसाद विमल की कहानी "मैं भी" में चित्रित भिखारी की पृष्ठभूमि अमरकांत के भिखारी से अलग है। जहाँ गांव के मुखिया के घर में उसे काम करना पड़ा, वहाँ मुखिया के पुत्र के कोढ़ रोग का उस पर भी असर पड़ा और उसे गाँव से निकाल दिया गया। तब से उसे जीने के लिये भीख मांगनी पड़ी। इस कहानी में आधुनिक युग होते हुए भी भारतीय गांव की सामंतवादी प्रवृत्ति दिखलाई गई है। कोढ़ से पीड़ित व्यक्ति के लिये भिखमंगी के अलावा कोई जीने का साधन नहीं था, न चाहते हुए भी जीने के लिये उसे भीख मांगनी पड़ी, लेकिन गांव में बाढ़ आने की वजह से खेत नष्ट हो गया और गांव के किसान नौकरी खोजने के लिये शहर में आने लगे। शहर में नौकरी खोजने वालों की भीड़भाड़ है। आजकल शिक्षित लोगों को नौकरी नहीं मिलती है तो अशिक्षित किसानों के लिये कहाँ काम मिलेगा। वस्तुवादी आधुनिक युग में पैसा ही सब कुछ है, बिना पैसे क्या किया जा सकेगा। इस दृष्टि से बेरोजगार किसानों की तुलना में भिखमंगी अच्छा व्यवसाय है क्यों कि भिखारी को रोज कुछ-न-कुछ नकद मिल जाते हैं। सामाजिक एवं व्यावसायिक दृष्टि से भिखमंगी सबसे निम्न व्यवसाय एवं वर्ग माना जाता है। भिखारी होने के लिये अपनी मर्यादा छोड़नी पड़ती है। कितने लोग अपनी मर्यादा भंग न कर पाने के कारण भूखे

Scanned with CamScanner

मर रहे हैं, परन्तु इस कहानी में भूखे मर जाने से बचने के लिये शरणार्थी किसान का लड़का भीख मांगने के लिये सड़क पर बैठ जाता है और नायक को देखकर भाग जाता है। "मुझे भी कोढ़ हो जाये। कम-से-कम नंदू भाई की तरह परिवार का पेट भर सकूँ। मैं भी।" कहकर। तभी नायक को लग रहा है कि वे लोग भी भिखमंगों की तरह बैठ जाने वाला हो। आधुनिक युग होते हुए भी खेत मजदूरों को प्रकृति से डरना पड़ता है। बाढ़, भीष्म सूखा, शीत लहर आदि के प्राकृतिक बदलाव पर खेतों की फसल निर्भर रहती है। अगर फसल नहीं मिलती तो खेत मजदूरों को शरणार्थी बनकर काम खोजने शहर में आना पड़ता है क्योंकि उन लोगों के मन में एक आशा है कि शहर में काम बहुत हैं, इसलिये कुछ-न-कुछ काम मिल जायेगा। कहा जाता है कि दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई जैसे शहरों में आने वाले शरणार्थियों की संख्या एक दिन में तीन सौ परिवार से अधिक है। उन लोगों को कहाँ काम मिलेगा। इसलिये इस कहानी की अन्तिम पंक्ति के नायक का कथन यथार्थपूर्ण है।

अब मेरे मन में और एक भिखारी की याद आयी है। वह है निराला जी की "देवी" में चित्रित भिखारिन। उन्होंने एक महिमा गूँगी भिखारिन को गहरी सहानुभूति के साथ चित्रित किया था। लगता था निराला जी की सहानुभूति उस भिखारी और गूँगी माँ के धरातल तक उतरी है। निम्न एवं कमजोर लोगों के प्रति कितनी दया और लगाव उनके मन में था। यह कहने की आवश्यकता नहीं है। सब उनके जीवन-चरित से मालूम होता है। इस कहानी में भी उनकी मानवतावादी सहानुभूति दिखाई देती है।

लेकिन एक ओर ऐसा भी कहा जा सकता है कि निराला जी का युग भविष्य में आशा रखने का युग था। स्वतंत्रता प्राप्ति के लक्ष्य के लिए सभी भारतीय लोगों के मन में आशावादी किरणें चमक उठी थीं, जो आशा स्वतंत्रता पर ही नहीं थी, बल्कि हर एक सामाजिक पहलू पर भी केन्द्रित थी। स्वतंत्रता के बाद गरीबी मिटेगी, काम मिलेगा इत्यादि और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यह आशा मृगतृष्णा में बदल गई। लोगों को यथार्थ देखना,, भोगना और सहना पड़ा। एक ओर बेरोजगार की संख्या, गरीबी की संख्या बढ़ रही थी, दूसरी ओर अमीर लोग और अधिक अमीर होने लगे। क्या आधुनिकता का अर्थ यह था? अमरकांत और गंगाप्रसद विमल की कहानी में चित्रित किया गया यथार्थ आधुनिकता का एक प्रतीक है और निम्न वर्ग के लोगों की परिस्थिति और तटस्थ रहने वाले मध्यवर्ग के लोगों की परिस्थिति भी आधुनिकता का प्रतीक है। समकालीन समाज की परिस्थिति को देखें तो भविष्य में मध्यवर्ग के लोगों के भिखमंगे बनने की कहानी पाठकों के सामने आने की सम्भावना है। ऐसा सोचते वक्त और एक भिखमंगे और कमजोर व्यक्ति से संबंधित कहानी मिल गई।

कहानी का नाम मिथिलेश्वर कृत "सवाल" है। इसमें एक अपाहिजनुमा व्यक्ति की जिन्दगी चित्रित की गई है। इस कहानी में भिखारी अपने व्यापार क्षेत्र से उस कमजोर व्यक्ति को हटाने के लिए आक्रमण करता है। मिथिलेश्वर ने इस कहानी में इस प्रकार निम्नवर्ग के भिखारी से लेकर बारी-बारी से उच्चवर्ग के लोगों के व्यवहार को चित्रित किया है। भिखारी, रिक्शावाला, दुकानदार, बड़े बाबू का ड्राइवर सभी ने उस अपाहिजनुमा व्यक्ति से घृणा की और स्टेशन में खड़े हुए लोग भी उसकी उपेक्षा करते रहे। आखिर वह अपाहिजनुमा व्यक्ति मर जाता है। इस अपाहिजनुमा व्यक्ति के लिए मरना ही अच्छा था या नहीं। अब तक के मिथिलेश्वर का कथा संसार गांव में था और गांव में घटित गतिविधियों को फोटोग्राफर की तरह कागज पर तस्वीर उतारते थे। अब महानगर में रहकर महानगर के सुविधा भोगी समाज में घटित दयाहीन यथार्थ को चित्रित करने लगे हैं। अब तक लेखक गांव के यथार्थ को तटस्थता से चित्रित किया करते थे और यह रचना-प्रक्रिया ही उनका दृष्टिकोण था, परन्तु लेखक ने इस कहानी में नगरवासी की मानसिकता में मानवता की एक आशा जोड़ने का प्रयास किया है। यह कहानी की अंतिम

Scanned with CamScanner

पंक्तियों में स्पष्ट दिखायी देता है। कुछ लोग या सब लोग समाज में कमजोर आदमी या निम्न वर्ग के लोगों के प्रति उपेक्षा नहीं करते, फिर भी वे कुछ नहीं कर पाते हैं। उन लोगों के मन में दया और मानवता की भावना अब भी बची हुई है पर उस भावना से क्या होगा। यह लेखक का "सवाल" है और लेखक इस "सवाल" को पाठकों के सामने छोड़ देता है ? इस प्रकार भिक्षावृत्ति परम्परागत व्यवसाय होते हुए भी आधुनिक युग के प्रतीकात्मक व्यवसाय के रूप में इसे कई कहानीकारों ने चित्रित किया है। उसमें युग और समाज प्रतिबिम्बित हैं और इस प्रकार निम्न वर्ग के लोगों की जिन्दगी चित्रित करने से बाह्य यथार्थ एवं मध्य वर्ग के लोगों का आन्तरिक यथार्थ स्पष्ट उभर आये हैं। अगर मध्य वर्ग के लोगों के तटस्थ रहने की भावना आधुनिकता का प्रतीक है तो लेखक के तटस्थता से लिखने की प्रवृत्ति भी आधुनिकता का प्रतीक कहलायेगी क्या ?

भारतीय भोजन व संगीत की दुकान

आ सू न

भारतीय वातावरण में आपका स्वागत है

Open : Mon-Fri 16 : 00-01 : 00
Sat-Sun 14 : 00-01 : 00
Sunday रात 8 बजे से भारतीय संगीत सभा

26-2, Kitazawa 3-Chome, Setagaya-ku, TOKYO,
Tel 03-465-7653

Scanned with CamScanner

आपका पत्र

"ज्वालामुखी" का तीसरा अंक प्राप्त हुआ। आपके इस ऐतिहासिक प्रयास का मैं अभिनन्दन करता हूं। मैं इस पत्रिका को केवल हिन्दी की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि भारत-जापान संस्कृति सम्बन्धों को सुदृढ़ करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण रचनात्मक प्रयास मानता हूं। इस पत्रिका के माध्यम से जापान के हिन्दी प्रेम का परिचय मिलता है।

लल्लन प्रसाद व्यास
"विश्व हिन्दी दर्शन"
नई दिल्ली

"ज्वालामुखी" का दूसरा अंक प्राप्त हुआ। आज सवरे मैं इसके दो ही लेख "भारतीय फिल्में" और "आधुनिक जापानी साहित्य की प्रवृत्तियां" पढ़ सका हूं। दोनों लेख गजब के हैं। अगर दूसरा लेख जापानी साहित्य की उपलब्धियों और प्रवृत्तियों को समझने में सहायक है और उसके द्वारा हमें यह पता चलता है कि मानसिक धरातल पर हमारी अनुभूतियां कितनी समान हैं, तो "भारतीय फिल्में" लेख में तामाकि मात्सुओका ने हिन्दी फिल्मों और तुलनात्मक ढंग से अन्य भारतीय फिल्मों का जो बेबाक और ज्ञानवर्द्धक चित्र खींचा है।

जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

सम्पादकीय में एक बात है—"हाँ, अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा अवश्य है, पर अपने देश में अन्तर्राष्ट्रीय भाषा की क्या आवश्यकता है" पूरी व्यक्ति की आंख खोलने के लिये काफी है।

रवीन्द्र कालेकर
पुणे

इस पत्रिका के प्रति मेरे मन में एक विशेष प्रकार की आत्मीयता है। इसका कारण यह है कि आप जापान के ही बंधुओं को हिन्दी में लिखने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। आपकी इस सेवा का निश्चय ही दूरगामी सुखद परिणाम निकलेगा। जापान और भारत दोनों देशों के संबंध अधिक प्रगाढ़ होंगे। भाषा और साहित्य कभी तोड़ने का काम नहीं करते जोड़ते हैं।

यशपाल जैन
नई दिल्ली

Scanned with CamScanner

"ज्वालामुखी" की पत्रिका मिली। धन्यवाद। इसके कुछ लेख तो बहुत ही अच्छे लगे। हिन्दी भी ऐसी बढ़िया लिखी है कि कभी-कभी तो विश्वास नहीं होता कि जिसने लिखी है हिन्दी उसकी मातृभाषा नहीं है। आशा है आप से प्रेरित होकर अन्य देशों में हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन के लिए ऐसे ही कदम उठाये जायेंगे।

डा० विजय गम्भीर
पेन्नसिलवनिय विश्वविद्यालय
अमरीका

पत्रिका के आइने में जापान का हिन्दी प्रतिविम्ब देखा जिसने कोमल भावनात्मक रिश्ता ही कायम कर दिया है। उन अनजाने लेखक-लेखिकाओं से एक सूक्ष्म मुलाकात-सी हो गयी तहेदिल से आभारी हूं।

उमिला कौल
बिहार

"ज्वालामुखी" में कहानी की कमी रही तथा उसमें भारत आये जापानियों के संक्षिप्त विचार भी रहना चाहिये।

वीरेन्द्र जैन पहाड़वाले
नजीवावाद

भारतीय भोजनालय
दान–रान

2 16-1 Kichijoji honmachi
Musashino-shi, TOKYO
Tel (0422) 22-5333

Scanned with CamScanner

छः अगस्त 1983 हिरोशिमा में

आकिओ ताकामुरा

मैं जापान में एक प्रसारण निगम एन. एच. के. में रेडियो जापान के हिन्दी विभाग में कार्यरत हूं। रेडियो जापान शार्ट वेव प्रसारण के जरिये विदेशी श्रोताओं को जापान के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराता है।

हर वर्ष अगस्त मास में हिरोशिमा शहर में परमाणु विरोधी विभिन्न आन्दोलनों का आयोजन किया जाता है। मैंने उनसे सम्बन्धित कार्यक्रम बनाने के लिये इस वर्ष भी हिरोशिमा की यात्रा की। हिरोशिमा में प्रवास के दौरान मुझे परमाणु विरोधी आन्दोलन में संलग्न अनेकानेक जापानियों तथा विदेशियों के साथ बातचीत करने का मौका मिला। मैं पाठकों को उस वक्त लिये इन्टरव्यू में से कुछ अंश संक्षिप्त रूप में अवगत कराऊंगा।

सबसे पहले अणु बम के शिकार बने और अब भी उसके उत्तर प्रभाव से पीड़ित एक व्यक्ति ने मेरे प्रश्न का जवाब ऐसा दिया।

"टी. वी. या रेडियो कार्यक्रम बनाने वाले केवल छः अगस्त को, जिस दिन हिरोशिमा पर अणु बम गिराया गया था, हिरोशिमा आते हैं और हमारे साथ बातचीत करते हैं। लेकिन आप इस दिन को छोड़कर अन्य किन्हीं अवसरों पर हमारी स्थिति पर ध्यान रखने का प्रयास नहीं करते। हमारी बीमारी हमेशा जारी रहती है। मेरा विचार है कि परमाणु युद्ध की त्रासदी न दोहराने की अपील करने के लिये निरन्तर प्रयासों की आवश्यकता है।

और दूसरी ओर एक अन्य अणु बम-पीड़ित ने यों कहा।

"हाँ, उनका कहना ठीक है। मगर अगर लोग छः अगस्त को भी हिरोशिमा पर ध्यान न दें, तो बात और भी गम्भीर हो जायेगी। इसलिये मेरा विचार है कि कम-से-कम छः अगस्त को हिरोशिमा पर ध्यान केन्द्रित करना ठीक है। विश्व के लोगों को हमारी दुःख पूर्ण स्थिति से अवगत कराने का प्रयास किया जाता है।"

हिरोशिमा में एक शान्ति सम्मेलन में भाग लेने वाली एक अमरीकी महिला के साथ भी मेरी भेंट हुई। उनका यह कथन है।

"यह मेरी पहली हिरोशिमा यात्रा है शान्ति पार्क के एक कोने में स्थित अणुबम संग्रहालय में तत्कालीन स्थिति को ताजा करने वाली असंख्य वस्तुयें दर्शायी गयी हैं। उन्हें देखकर मुझे एक बार फिर परमाणु युद्ध की विभीषिका पर विचार करना पड़ा। आजकल अमरीका में परमाणु विरोधी आन्दोलन जोर पकड़ता जा रहा है,

Scanned with CamScanner

क्योंकि दो महाशक्तियों के बीच परमाणु शस्त्र होड़ भीषण स्थिति ग्रहण कर चुकी है, और अब उससे सम्बद्ध कोई समझौता सम्पन्न होने की सम्भावना दिखाई नहीं देती। मगर सच तो यह है कि परमाणु विरोधी हमारी भावना में कोई वास्तविकता नहीं है। मेरे विचार में वह शायद इसलिये कि हम अमरीकी एक बार भी अणु बम की विभीषिका का शिकार नहीं बने हैं। मेरा अनुरोध है कि परमाणु शस्त्र होड़ में संलग्न विश्व के सभी लोग हिरोशिमा में अणुबम संग्रहालय का दौरा करें और परमाणु युद्ध की अति भयानक स्थिति के विभिन्न पहलू देखें।"

इसी बीच दक्षिण कोरिया के एक व्यक्ति ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये।

"यह बहुत अच्छी बात है कि जापानी लोग परमाणु विरोधी आन्दोलनों में गम्भीरता से जुटे हुए हैं। परन्तु मेरे विचार में वे केवल कष्ट पाने वालों के पक्ष में ही आवाज उठाते हैं और यह भूल जाते हैं कि द्वितीय विश्व युद्ध में वे एशियाई देशों के हमलावर थे। जब तक वे अपने इस रवैये में परिवर्तन नहीं करते, तब तक उनके परमाणु विरोधी आन्दोलनों के लिए अन्य एशियाई लोगों का समर्थन पा लेना मुश्किल होगा। यह भी एक वास्तविकता है कि जापानी सेना के एशियाई देशों पर आक्रमण, दो अणुबमों से खत्म हो गये।

इस प्रकार हिरोशिमा में एकत्र लोगों का मत, अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार मेरे सामने उभर आया। मगर मेरा पक्का विश्वास है कि इन सभी लोगों की शांति का रास्ता खोजने की गहरी इच्छा है। विश्व के अधिकतर लोग सोचते हैं कि अगर परमाणु शस्त्र होड़ यों ही जारी रही, तो मानव का भविष्य अंधकारमय होगा। फिर भी आजकल परमाणु युद्ध की आशंका दूर करने के प्रयासों में सफलता नहीं मिल रही है। ऐसा क्यों है? इस प्रश्न का उत्तर देना कोई सहज कार्य नहीं है। लेकिन मेरे मन में हिरोशिमा में रहने वाली अणुबम पीड़ित एक कवियत्री के ये शब्द अब भी ताजा हैं।

"परमाणु बम तो मानव के हाथों से ही बना है। इसलिए उसे उसी के हाथों नष्ट करवाना कोई मुश्किल काम नहीं होगा।"

Scanned with CamScanner

समीक्षा

हमारे पास समीक्षार्थ कई पुस्तकें प्रेषित की जाती हैं। खास तौर पर तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर सम्पादक को कई पुस्तकें प्रेषित की गईं। परन्तु उस वक्त पत्रिका भी प्रकाशित होने वाली थी। अतः समयाभाव के कारण इन सभी पुस्तकों की समीक्षा इस पत्रिका में प्रस्तुत करना असम्भव प्रतीत होता है। जिन लोगों ने सम्पादक को पुस्तकें दी हैं उनके प्रति सम्पादक आभार प्रकट करता है।

"जापानी हाइकु और आधुनिक हिन्दी कविता"

लेखक : डा. सत्य भूषण वर्मा, प्रकाशक : हिन्दी विकास पीठ, मेरठ, 1983, मूल्य 40 रुपये (भारत में), 6 अमरीकी डालर (विदेशों में)

यह पुस्तक डॉ. सत्यभूषण वर्मा की हाइकु संबंधी दूसरी पुस्तक है। डॉ. वर्मा ने इस पुस्तक में जापानी हाकुक के मूल स्वरूप अर्थात् दर्शन, सिद्धांत का परिचय सरल भाषा में देने के साथ-साथ हिन्दी हाइकु का ऐतिहासिक विश्लेषण भी किया है।

हाइकु जापानी भाषा की 17 अक्षरी त्रिपदी लघु कविता है जिसमें प्रकृति वर्णन अनिवार्य है परन्तु जापानी हाइकु को प्रकृति प्रधान काव्य नहीं कहा जा सकता। क्योंकि इस प्रकृति वर्णन में ही जापानी लोग जीवन की क्षणभंगुरता, प्रकृति के गतिमान, नश्वर रूप को महसूस कर सकते हैं अर्थात् इस प्रकृति वर्णन में जापानी लोगों का जीवन-दर्शन सम्मिलित है। उसे डॉ. वर्मा ने विस्तार से अवगत कराया और उन्होंने हाइकु से प्रभावित हिन्दी कविताओं एवं हिन्दी हाइकु का जापानी हाइकु सिद्धांत की दृष्टि से नया मूल्यांकन भी किया है। उनका प्रयास प्रशंसनीय है।

इस पुस्तक में लेखक ने जापानी हाइकु के हिन्दी अनुवाद का मूल्यांकन भी किया है। अब तक भारत में जिन जापानी हाइकु का अनुवाद हुआ है उनका अनुवाद मूल जापानी हाइकु से न होकर अनूदित अंग्रेजी भाषा से हुआ है। परिणामतः उनके हिन्दी अनुवादकों ने मूल जापानी हाइकु से अलग किस्म की कविता बना दी। लेखक ने इन अनूदित हिन्दी हाइकु को मूल जापानी हाइकु से तुलना करके तर्क संगत ढंग से उन अनूदित हाइकु के अभावों का स्पष्टीकरण किया। जहाँ तक अनुवाद का सवाल है हाइकु के हरेक शब्द को हिन्दी में या जापानी भाषा में अनुवाद करना ही उत्तम अनुवाद नहीं होगा। दरअसल हाइकु में छिपे भावार्थ को भी उजागर करना अनुवाद की आवश्यकता है। यह हाइकु को अनुवाद करते समय बड़ी समस्या बन जाती है। हमारे पास भारत के हाइकु प्रेमियों द्वारा हिन्दी हाइकु प्रेषित किया जाता है और हाइकु के साथ अनुरोध पत्र भी संलग्न हैं जिसमें लिखा है कि हिन्दी हाइकु को अनुवाद करके किसी जापानी हाइकु पत्रिका में प्रकाशित कर दें। दूसरी भाषा में रचे हाइकु को जापानी हाइकु के सिद्धान्तानुसार 5-7-5 क्रम वाली जापानी हाइकु में अनुवाद करना क्या सम्भव होगा ? अलग

Scanned with CamScanner

संस्कृति वाले देशों के लोगों के हाइकु का जापानी लघु कविता में अनुवाद कैसे हो सकेगा। अगर सौभाग्य से जापानी हाइकु के सिद्धान्तानुसार किया भी जा सकता है पर वह अनूदित हाइकु जापानी हाइकु साहित्य में उच्च कोटि का हाइकु अर्थात् हाइकु का संज्ञा दिया जायेगा या नहीं। यह अलग बात है। अगर हिन्दी हाइकु का अनुवाद गद्य में किया जाता है तो ठीक ढंग से किया जा सकता है। हाइकु बहुत गहरी कविता है। इन दो-तीन सालों में भारत में भारतीय भाषाओं का हाइकु बहुत विकसित हुआ है। इस समीक्षक का व्यक्तिगत विचार है कि हिन्दी हाइकु हिन्दी में ही विकसित करना सबसे उचित होगा।

"पेड़ उदास हैं"

(लेखक : अनत रमेश, "ऋतु चक्र" इक्कीस अंक)।

लेखक ने लघु कथा में पेड़ के द्वारा बदलते परिवेश को स्पष्टता से चित्रित किया है। प्राचीन काल से पेड़ महत्वपूर्ण कार्य निभाते आया है। गर्मी के दिनों में पेड़ लोगों को छाया और ठण्डी हवा देता है, पत्तों की सरसराहट की आवाज सुनकर लोगों को कितना आनन्द महसूस होता है। लेकिन आधुनिकता के नाम पर समाज बदलने लगा है। लोहे का घोड़ा धुआँ निकालकर चलता है जिसे लोग रेलगाड़ी कहते हैं। लोहे के घोड़े को पेड़ों की आवश्यकता नहीं, आवश्यकता तो कोयला है। उद्योगीकरण के नाम पर वृक्ष काटा जा रहा है। प्रकृति नष्ट हो रही है। इस बदलते परिवेश को देखकर "पेड़ उदास है" और पेड़ ही नहीं आदमी भी उदास है। इस लघु कथा में लेखक की यह भावना भी छिपी है।

"टुकड़ा-टुकड़ा आदमी"

(लेखिका : मृदला गर्ग, प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, द्वितीय संस्करण 1983, मूल्य 22 रुपये)

इस कहानी संग्रह में संगृहीत कहानियों की विशेषता है हर एक इन्सान के मन में छिपी स्वार्थ भावना का चित्रण। "टुकड़ा-टुकड़ा आदमी" में लेखिका ने इन्सान की कथनी और करनी के अन्तर को चित्रित किया है। किसी भी इन्सान के मन में कुछ-न-कुछ स्वार्थ भावना होती है पर उसे दिखाते नहीं। बुजुर्आ वर्ग के लोग कभी निम्न वर्ग का सही जीवन देखते हैं तो उस पर दया की भावना उत्पन्न हो जाती है पर क्षण भर के लिये। आज-कल धर्म का भी अपने हितों के लिये इस्तेमाल होता है ("दूसरा चमत्कार")। दाम्पत्य जीवन में भी अगर स्वार्थ भावना उत्पन्न होती है तो दाम्पत्य जीवन का पतन होगा। "अवकाश" में दाम्पत्य जीवन का पतन चित्रित किया गया है। लेखिका इन्सान की स्वार्थ भावना को उजागर करने के साथ प्रेम के बारे में भी यथार्थ पूर्ण ढंग से चित्रण करती हैं। सुबोध कुमार और प्रभा का प्रेम संबंध क्या है? "अवकाश" में चित्रित दम्पति का प्रेम क्या है? श्रीमती मृदला गर्ग की कहानियाँ पाठकों को सोचने पर मजबूर कर देती हैं चाहे पाठक अमीर हो या निम्न मध्य वर्ग का हो।

"हम प्यार कर लें"

(लेखक : गिरिराज किशोर, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, सन् 1980, मूल्य : 16 रुपये)

इस कहानी संग्रह में दस कहानियाँ संग्रहीत हैं। इन कहानियों में से ऊपर लिखित शीर्षक की कहानी एक अजीब-सी मनःस्थिति की कहानी है। बारिश के मौसम में एक मर्द और लड़की (लेखक ने इसे औरत या महिला नहीं लिखा। शायद लड़की मर्द से काफी जवान होगी।) एक कमरे में लेटे हैं। बाहर तेज बारिश हो रही है। कमरे में एक अजीब-सा सन्नाटा छाया हुआ है। मर्द और लड़की बातें करते हैं परन्तु दोनों का वार्तालाप एक दूसरे

Scanned with CamScanner

से संबद्ध नहीं है व्यर्थपूर्ण बातें करते हैं पर उन व्यर्थपूर्ण बातों से न जाने क्यों दोनों का संबंध स्पष्ट उभर आता है और कहानी के अंत में कहते हैं कि हम प्यार कर लें। लेकिन उन दोनों का प्यार कौन-सा प्यार है ? प्रेम का सही स्वरूप क्या है ? यह कहानी श्रीमती मृदला गर्ग की कहानियों की तरह प्रेम के संबंध में पाठकों को सोचने पर मजबूर कर देती है।

इसके अलावा अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रेषित की गई हैं :—

"जनमेजय" (लेखक : मदन मोहन उपेन्द्र), "इतिहास का दौर" (लेखक : रामकृष्ण 'विकलेश'), "हल्दी घाटी रो गौरव" (लेखक : भानसिंह शेखावत 'मरुधर'), "श्रद्धांजलि" (लेखिका : मिथिलेश कुमारी मिश्र), "तुलसी के राम" "गोस्वामी तुलसीदास समाज के पथ-प्रदर्शक" "अस अद्भुत बनी" (सं : मानस संगम), "सरदार ऊधम सिंह" (लेखक : मुरलीधर झा) "यथा प्रस्तावित" (लेखक : गिरिराज किशोर) "अपनी जबान में कुछ कहो" (विक्तोरिया तोकारेवा की रूसी कहानियाँ, अनुवादक : हेमचन्द्र पांडे), "समुद्र का एकान्त" (लेखक : आलोक शर्मा), "प्रेमचन्द" (मेरठ विश्वविद्यालय हिन्दी परिषद्), "तेवरी" (लेखक : देवराज एवं ऋ. दे. शर्मा 'देवराज'), "श्रेष्ठ समान्तर कहानियाँ" (सं : हिमांशु जोशी), "अदृश्य नदी" "सड़कों पे ढले साये" (लेखक : उपेन्द्रनाथ अश्क), "अनारो" (लेखिका : मंजुल भगत), पत्रिकाएँ "ऋतु चक्र" "कथांतर" "वीथी" और हाइकु से संबंधित पत्र जैसे "हाइकु" आदि।

Scanned with CamScanner

इस अंक के लेखक

1. **डा० तोमिओ मिजोकामि,** ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हिन्दी विभाग सहायक प्रोफेसर,
   पता : 24-6, गोतेनयामा 2 च्योमे, ताकाराजुका-शि, ह्योगो-केन्
2. **श्री महेन्द्र साइजि माकिनो,** विश्व भारती, जापानी भाषा विभाग, अध्यापक
   पता : 11, एण्ड्रूज पाल, पो. ओ. शान्ति निकेतन, पश्चिम बंगाल
3. **डा० नोरिहिको उचिदा,** क्योतो विश्वविद्यालय, साहित्य विभाग प्रवक्ता
   पता : शिवाको मिसोरा दाइनी दान्ची 8-102, मिसोरा-च्यो, ओत्सु-शि, शिगा-केन्
4. **आकिओ ताकामुरा,** रेडियो जापान हिन्दी विभाग
   पता : 2-17 कागा 1 च्योमे, काशिवा-शि, चिबा-केन्
5. **योशिआकि सुजुकि,** "ज्वालामुखी" सम्पादक
   पता : 5-9 मात्सुयामा 3 च्योमे, कियोसे-शि, तोक्यो
6. **आकिरा ताकाहाशि,** ओसाका विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हिन्दी विभाग प्रवक्ता
   5-6-12 सोने हिगाशिच्यो, तोयोनाका-शि, ओसाका

विशेष सहयोगी

1. **मासुरो त्सुजिमुरा,** 4-5 हिगाशिकानामाचि 4 च्योमे, कात्सुशिका-कु, तोक्यो
2. **कैलाशचन्द्र पाण्डे एवं उनके परिवार,** बाई 81 हौज खास, नई दिल्ली
3. **योशिको ओगावा,** केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, दिल्ली कैम्पस, नई दिल्ली
4. **शिगेओ आराकि,** अध्यक्ष, एशियाई सांस्कृतिक संघ
   पता : 249-7 मोमुरा, इनागि-शि, तोक्यो

Scanned with CamScanner